कैनेडा से प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका

# वसुधा

Year 20, Issue 78
April – June, 2023

VASUDHA A CANADIAN PUBLICATION

FOUNDER-EDITOR-PUBLISHER : Dr. SNEH THAKORE
AWARDED BY THE PRESIDENT OF INDIA

संस्थापक, सम्पादक व प्रकाशक
डॉ. स्नेह ठाकुर
भारत के राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत

वर्ष २० - अंक ७८, अप्रैल - जून २०२३

# सौंदर्य-बोध : कल और आज

पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि

सौंदर्य -
बँध गया था कभी
रोटी के टुकड़े में
आज भी बँधा है
पर रोटी के टुकड़े में नहीं
एक जाला बुन लिया है अब
प्रतिष्ठा के मकड़े ने
और
खड़ा कर दिया है लाकर
आयु के कटघड़े में.

कैसा शोषक है
काल का अंतराल
निगल गया समय
क्षुधा को
पिपासा जीवित रहती है
शायद
अंतिम साँस तक
और हम
हिचकी भरते
चल पड़ते हैं
अपने नीड़ की ओर.

नीड़
जहाँ बर्रों के छत्ते हैं
लपलपाते साँपों के बिल हैं
भौंकते कुत्ते हैं
और
अपने शव को
शान-शौकत के साथ ढोते
हम हैं
हाँ,
हम हैं.

# वसुधा


## सस्थापक, सम्पादक व प्रकाशक : डॉ. स्नेह ठाकुर

(पोस्ट-डॉक्टरल फ़ेलोशिप अवार्डी)

(भारत के राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति भवन में "हिन्दी सेवी सम्मान" से सम्मानित)

(वर्ल्ड बुक ऑफ़ रिकॉर्ड, लन्दन में नाम अंकित)



| शीर्षक | रचयिता | पृष्ठ |
|---|---|---|
| सम्पादकीय | | २ |
| उम्र की ऐसी-तैसी | अटल बिहारी बाजपेयी | ३ |
| फागोत्सव | डॉ. ऋतु माथुर | ५ |
| गुण त्रय-विभाग योग | अविनाश कुमार | ६ |
| मैं अलहदा हूँ | डॉ. शिप्रा शिल्पी सक्सेना | ७ |
| श्याम वर्ण के दर्पण | डॉ. आरती 'लोकेश' | ८ |
| नारी की पहचान | राजश्री राठी | ११ |
| चमत्कारों का सिरमौर हैं करतार | डॉ. सन्तोष खन्ना | १३ |
| अब तमाशा वफ़ा का नया कीजिए | डॉ. आशीष कंधवे | १६ |
| डिजिटलीकरण और हिन्दी | वीरेंद्र कुमार यादव | १७ |
| बीत गया सो बीत गया | इन्द्र कुमार दीक्षित | २० |
| संयुक्त परिवार - बरगद की छाँव | अंकुर सिंह | २२ |
| पर्यावरण प्रदूषण/दोहन | डॉ.इ.- गौतम सागर | २३ |
| ओल्ड, गोल्ड, बोल्ड | प्रो. बीना शर्मा | २५ |
| इलाज़ | बी.एल. गौड़ | २६ |
| अनार्यों की देन | रवीन्द्र नाथ ठाकुर | २८ |
| आज़ादी का अमृत महोत्सव यूँ मनाएँ | डॉ. एम.एल. गुप्ता 'आदित्य' | २९ |
| खजुराहो यात्रा | डॉ. विदुषी शर्मा | ३० |
| रोटेशन सिस्टम | राम नगीना मौर्य | ३५ |
| हे शिव! | रमेश चंद्र | ४२ |
| छायावादोत्तर हिन्दी कविता | डॉ. मीनकेतु प्रधान | ४३ |
| सौंदर्य-बोध : कल और आज | पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि | १ अ |
| डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार | | ४४ अ |



रचनाओं में निहित विचार तथा मन्तव्य रचनाकारों के निजी विचार तथा मन्तव्य हैं। 'वसुधा' रचनाकारों के विचारों के लिए उत्तरदायी नहीं है। प्रकाशक की आज्ञा बिना कोई रचना किसी प्रकार उद्धृत नहीं की जानी चाहिए। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा।



रचनाएँ भेजने के लिए सम्पर्क पता :

16 Revlis Crescent, Toronto, Ontario M1V-1E9, Canada. TEL. 416-291-9534



वार्षिक शुल्क Annual subscription.....$25.00

डाक द्वारा By Mail $35.00, International Mail $40.00

Website: http://www.Vasudha1.webs.com

e-mail: dr.snehthakore@gmail.com

# सम्पादकीय

डॉ. वेद प्रताप वैदिक जी का इस तरह अचानक जाना न केवल पत्रकारिता जगत की अमूल्य क्षति है, वरन् जो भी उन्हें जानता है, उसकी व्यक्तिगत् क्षति भी है। मैने हरदम उन्हें हँसते-मुस्कुराते हुए ही देखा है। यह मेरा और वसुधा का सौभाग्य है कि उनकी अनेक रचनाएँ वसुधा में प्रकाशित हुई हैं।

हिन्दी के प्रति समर्पण का इससे अच्छा उदाहरण और क्या हो सकता है कि स्वर्गीय डॉ. वेद प्रताप वैदिक जी ने १३ वर्ष की आयु में हिंदी के लिए सत्याग्रह किया और उस कारण जेल तक गए और वे अंत तक, अपनी अंतिम श्वास तक हिन्दी के प्रति समर्पित रहे। हिंदी के प्रति प्रतिबद्धता का अनूठा उदाहरण उन्होंने जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में अपना शोध प्रबंध हिंदी में प्रस्तुत करते हुए दिया जिसे उस समय विश्वविद्यालय प्रशासन ने अस्वीकार कर दिया था और कहा कि वे अपना शोध अँग्रेजी में ही लिखकर दें। इस बार भी वैदिक जी नहीं झुके। इस विषय पर भारतीय संसद में ज़बरदस्त हंगामा हुआ। इस समय वैदिक जी को डॉ राम मनोहर लोहिया, मधु लिमये, अटल बिहारी वाजपेयी, चंद्रशेखर, भागवत झा आज़ाद, आचार्य कृपलानी, प्रकाशवीर शास्त्री आदि का प्रबल समर्थन प्राप्त हुआ और वैदिक जी के शोध को अंततोगत्वा हिंदी में स्वीकार किया गया। अपने इन कृत्यों से वे हिंदी संघर्ष के लिए एक प्रकाश स्तम्भ बन गए हैं जो आगे आने वाली पीढ़ी का मार्ग प्रदर्शन करेगा। उन्होंने अपने चिंतन से, हिंदी के प्रति अपने प्रण से यह सिद्ध कर दिया है कि अपनी भाषा में किया गया काम हर हाल में उधार में ली गई भाषा से कहीं उत्तम दर्जे का होता है। उन्हें इस बात का सदैव दर्द रहा कि उनका पासपोर्ट, प्रत्येक भारतीय का पासपोर्ट अँग्रेजी में क्यों है, हिंदी में क्यों नहीं। क्योंकि सभी अन्य देशों का पासपोर्ट उनकी स्वयं की भाषा में होता है। उनका क्यों नहीं? हम अँग्रेजी को क्यों इतना महत्त्व देते हैं! अपनी भाषा को क्यों नहीं? दुनिया के सभी राष्ट्रों की तरह हम अपनी भाषा को प्राथमिकता क्यों नहीं देते। यह नहीं कि वे दूसरी भाषाएँ नहीं जानते थे। यद्यपि की संस्कृत, फारसी और रूसी भाषा का उन्होंने विशेष प्रशिक्षण प्राप्त किया था। अँग्रेजी के जानकार थे। ८० देशों का भ्रमण करने वाले, बहुतों की संस्कृति से परिचित, पर अपनी भाषा और संस्कृति को सर्वोच्च रखने वाले वेद प्रताप वैदिक जी जिन्होंने हिंदी में बेहतर पत्रकारिता का युग आरम्भ किया, अपने हिंदी के प्रति जीवन मूल्यों से अनंतकाल तक याद किए जाएँगे। ईश्वर उनकी आत्मा को शांति प्रदान करें। माननीय वेद प्रताप वैदिक जी को हम सब हिंदी प्रेमी अपनी श्रद्धांजलि के रूप में उनकी स्मृति से यह वायदा करके ही उसे न्यायसंगत कर सकते हैं कि हम उनकी जलाई मशाल लेकर उनके स्वप्न को पूरा करने का बीड़ा उठाएँगे । वसुधा के साहित्यकारों एवं पाठकों की ओर से वैदिक जी को भावभीनी विनम्र श्रद्धांजलि।

कैनेडा में बर्फ़ ने धरती पर से अपना साम्राज्य बटोरना आरम्भ कर दिया है। अब न केवल सूर्य किरणें प्रखर हो रही हैं वरन् सूर्य देवता भी इस देश की धरती पर एवं इस देश के वासियों पर अपनी सूर्यास्त की अवधि बढ़ा कर, उन्हें अपनी अनुकम्पा से अनुग्रहित कर रहे हैं।

ठण्ड के इस मौसम से त्रस्त, मानव के साथ-साथ पशु-पक्षी, जीव-जन्तु भी वसंत के आगमन हेतु अधीरता से प्रतीक्षारत हैं।

सभी के प्रति मंगल-कामनाओं सहित,

सस्नेह,

स्नेह ठाकुर

## उम्र की ऐसी-तैसी

### अटल बिहारी बाजपेयी

घर चाहे कैसा भी हो
उसके एक कोने में
खुलकर हँसने की जगह रखना।

सूरज कितना भी दूर हो
उसको घर आने का रास्ता देना।

कभी-कभी छत पर चढ़कर
तारे अवश्य गिनना
हो सके तो हाथ बढ़ाकर
चाँद को छूने की कोशिश करना।

अगर हो लोगों से मिलना-जुलना
तू घर के पास पड़ोस जरूर रखना।

भीगने देना बारिश में
उछल कूद भी करने देना
हो सके तो बच्चो को
एक कागज़ की किश्ती चलाने देना।

कभी हो फुरसत, आसमान भी साफ हो
तो एक पतंग आसमान में चढ़ाना
हो सके तो एक छोटा-सा पेंच भी लड़ाना।

घर के सामने रखना एक पेड़
उस पर बैठे पक्षियों की
बातें अवश्य सुनना।

घर चाहे 'कैसा' भी हो
घर के एक कोने में
खुलकर हँसने की जगह रखना।

चाहे जिधर से गुज़रिए
मीठी-सी हलचल मचा दीजिए।
उम्र का 'हर एक दौर' मज़ेदार है
अपनी 'उम्र' का मज़ा लीजिए।

जिंदा दिल रहिए ज़नाब
ये चेहरे पे उदासी कैसी
वक्त तो बीत ही रहा है
'उम्र की ऐसी की तैसी।'

# फागोत्सव

## डॉ. ऋतु माथुर

मधुमय मास आया,
ऋतुपति का प्रभुत्व छाया।
कोकिला की कूक ने सुमधुर फाग गाया।
सकल छाई है उमंग, गोपिन ग्वाल बालन के संग,
नटखट नंदलाल खेलत फागुन के रंग।

श्याम रंग में डूबकर श्यामा(यमुनाजी) भी भयी कारी है,
स्नेहसिक्त अनुरक्त भये राधिका संग गिरधारी हैं।
फागोत्सव की उमंग में आज प्रकृति ने चैतन्यताधारी है,
प्रीति रस में भीज रहे बिरज के सब नर नारी हैं।

सतरंगी चूनर ओढ़ वधू सम अयोध्या भी इठलाई है,
राम रंग में तरण कर आज तो सरयू भी पावन कहलाई है।
सियाराम के नेह में बिंध फागोत्सव की तरुणाई है,
जन मन प्रमुदित भयो अवध में, ऐसो जानकीनाथ की प्रभुताई है।
माँ पार्वती की तपस्या देखो रंग लाई है,
काशीनाथ ने अद्भुत धूनी रमाई है,
जटा जूट में ऐसा पावन पुण्य संजो,
स्वयं पतितोद्धारिणी भी हर्षाई है।
निरख सखी शिवधाम में भंग भभूत लिए फागुन की ऋतु आई है।

प्रकृति के हर जड़ चेतन में,
भारतीय संस्कृति कि अतिशय गहराई है।
परमेश्वर के अर्द्धनारीश्वर स्वरूप में,
सदा नारी ही वंदित होती आई है.
सिय, राधा, पार्वती की प्रिय फागुन की ऋतु फिर आई है।

# अध्याय १४ – गुण त्रय-विभाग योग

**अविनाश कुमार**

इस अध्याय में कृष्ण प्रकृति के तीन मूल गुणों – सात्विक, राजसी व तामसिक से अर्जुन का परिचय कराते हैं। वे गुणातीत पुरुष के लक्षण और भक्ति के द्वारा गुणों के पार हो जाने का पथ प्रशस्त करते हैं।

सात्विक, राजसी और तामसिक गुणों का ज्ञान अत्यंत आवश्यक है। प्रभु ने स्वयं इन गुणों के लक्षण विस्तार से बताएँ हैं, और उनके आधार पर शरीर की अवस्था, ज्ञान, तप और दान के कर्मों का फल एवं भक्ति निदान की व्याख्या की है।

सत्व, रजस  और गुण तामस, प्रकृति के ही विकार,
निर्देह आत्मा को तीनों, देते  शरीर आकार।
सत्व प्रकाशक, निर्मल होवे, अज्ञानता को फाँद,
सुख-ज्ञान आसक्ति से, काया में दे बाँध।
रजो गुण है रागस्वरूप, कर्म की उत्पन्न इच्छा,
देह से बाँधे, पैदा कर, कर्म औ फल की तृष्णा।
तम  गुण है सबसे लुभावन, जिसका मूल अज्ञान,
आलस्य, भोग विलास में, बाँधे सबका ध्यान।
सत्व तो जीते ज्ञान के द्वारा, रजो कर्म के नाम,
गुण तमस है सीमित रखता, देता मात्र अज्ञान।
ज्यों काया के सब द्वारों में, जागे वेग प्रकाश,
समझो, सत्गुण है बढ़ता, अनंत अविरल आकाश।
किन्तु मन जो लोभ विराजे, रजो गुण बढ़ता जाये,
नित नए-नए कर्मों की वृद्धि, अशांति, तृष्णा घर लाये।
और तमोगुण जब हो बढ़ता, उसका फिर क्या कहना,
अज्ञान, मोह, आलस्य है घेरे, जीवन रत्न का गहना।
जी मे सत्व गुण फलते-फूलते, जाते हैं जो प्राण,
वे मनुज कर जाते हैं, हरी लोक प्रस्थान।
रजो गुण आरोहित हो तो, मनुष्य जन्म फिर पावे[१],
तमो गुण की आसक्ति लेकिन, योनि मूढ़ दिलावे[२]।

रजो गुण से ग्रस्त होने पर मनुष्य में अतृप्त इच्छाएँ जागृत होती हैं एवं तमो गुण से प्रभावित व्यक्ति अतृप्त ध्येय से ग्रस्त रहता है।

सुख-दुख मे एक सम रहो जो, मिट्टी सोने समान,
प्रिय अप्रिय का भेद न जाने, निंदा या सम्मान।
मान अपमान जिसे न भेदे, मित्र शत्रु न जाने,
गुणातीत मनुष्य के जैसे, सब उनको पहचाने।

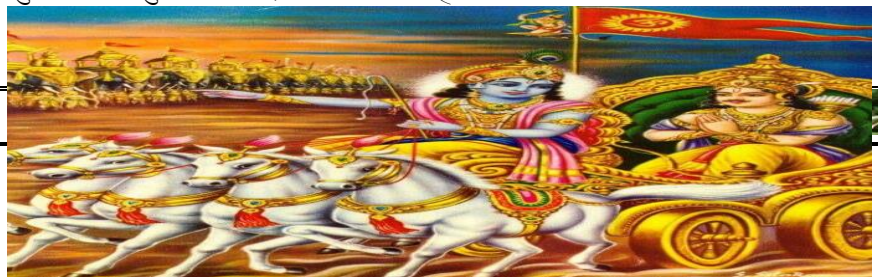

# मैं अलहदा हूँ

डॉ शिप्रा शिल्पी सक्सेना
(शिक्षाविद, पत्रकार)

मैं अलहदा हूँ,
अलहदा अंदाज रखती हूँ !
दिल के रिश्तों में दिल से ही काम लेती हूँ।
जैसा देश वैसा मिज़ाज है मेरा।
समयानुरूप मन को ढालती हूँ, ज़िन्दगी के साँचे में।
गहन विषयों को, चिंतन से आँकती हूँ मैं।
बात खुशियों की हो, तो मुस्कुराहटें बाँटती हूँ मैं।
दर्द में हो कोई अपना, तो बेसाख्ता गले लगाती हूँ।

मैं अलहदा हूँ,
अलहदा अंदाज रखती हूँ !
मैं रोती हूँ, मैं हँसती हूँ, मैं लड़ती हूँ, मैं तनती हूँ।
सही को सही, गलत को गलत कहती हूँ।
न डरती हूँ, न थकती हूँ, प्रेम से जीवन बुनती हूँ।
जो ठान लूँ कोई काम, तो जी जान से निभाती हूँ।
जिसे कह दूँ मैं अपना, उसे दिल मे बसाती हूँ।

मैं अलहदा हूँ,
अलहदा अंदाज रखती हूँ !
न कोई आवरण, न कोई छलावा है।
हूँ सादा दिल, सादगी मेरा पहनावा है।
सरल, सीधा, सहज है जिंदगी का फलसफा मेरा।
जो दे मौला करम उसका, अदा करती हूँ शुकराना।
मिले मुझको मेरे हक़ का, बस खुशी से है अपनाना।
कौन क्या कहता है मुझको, कभी अखरा नही मुझको।
मुझे जो प्यार करते है, वो मुझे परखा नही करते।

मैं अलहदा हूँ,
अलहदा अंदाज रखती हूँ।

दिल के रिश्तों में बस दिल से ही काम लेती हूँ।

# श्याम वर्ण के दर्पण

**डॉ. आरती 'लोकेश'**

"नेमु! दो कप चाय ले आ गार्डन में।" अपने घुँघराले बालों को लपेटकर जूड़े का रूप देते हुए स्वर्णलेखा सीढ़ियों से उतरी और पिछले चालीस बरस की आदत के अनुसार रसोई के आगे से निकलते हुए आया को आदेश दिया। नेमुनि अचम्भित-सी रसोई से बाहर आई। तब तक स्वर्णलेखा ने एक झाड़न अपने हाथ में ले लिया था।

"गार्डन की मेज तो साफ़ की नहीं होगी तूने।"

स्वर्णलेखा ने कृत्रिम नाराज़गी से नेमुनि को देखा और फिर एक दृष्टि हॉल के बाहर गार्डन में रखी दो कुर्सियों के मध्य विराजी मेज पर डाली। नेमुनि ने उसके हाथ से झाड़न ले लिया और हॉल का दरवाज़ा खोलने लगी।

"बोला न! मेज से धूल मैं झाड़ दूँगी। तू जा... दो चाय का पानी रख गैस पर।" स्वर में तल्ख दृढ़ता उभर आई थी।

वह हॉल के दरवाज़े को थोड़ा और खिसकाकर बाहर आई और फुर्ती से लकड़ी की बेमिसाल कारीगरी वाली मेज पर बिखरे अखबार के पन्ने और मैगज़ीन सँभालने लगी।

"दो चाय? बीबी जी!" नेमुनि भी पीछे-पीछे ही चली आई। वह तो चाय पीती न थी।

स्वर्णलता के हाथ से लेकर अखबार तो उसने सँभाल लिए थे किंतु इतनी मजबूती वह अपने हाथों में न पाती थी कि अपनी बीबीजी को सँभाल सके। वह आँखें फाड़े उसे ताक रही थी। अपने चेहरे पर नेमुनि की गढ़ी हुई आँखें महसूस करते ही स्वर्णलता की आँखें पनीली हो आईं। उसका सिर चकराने लगा और वह खड़ी न रह सकी। नेमुनि ने सहारा देकर उसे कुर्सी पर बिठाया। उसने सिर पीछे कर आँखें कसकर बंद कर लीं। जो वह कभी देखना नहीं चाहती थी, वह दृश्य अब उसका जीवन बन चुका था।

"अभी लाई आपके लिए चाय... " नेमुनि के थके-से कदम रसोई की ओर बढ़ गए।

स्वर्णलेखा की बंद आँखों के पानी में कई स्मृतियाँ तैर गईं। वेदप्रकाश और वह तीनों बेटियों की शादी कर जिम्मेदारियों से गतवर्ष ही मुक्त हुए थे। बेटी को अपने ससुराल में सुखी पाकर वे अब निश्चिंत थे। अत: इस बार एक माह केन्या, युगांडा, तंज़ानिया आदि अफ़्रीकी देशों का भ्रमण करने गए थे। केन्या में ही उन्हें ब्लैकवुड से बनी यह मेज़ पसंद आई थी। सोने की-सी कीमत वाली इस मेज़ और दो कुर्सियों का दुबई तक आने का व्यय भी बहुत था। इतनी राशि में ऐसी ही आबनूस की कई मेज़ खरीदी जा सकती थीं और अगर अपनी ही फैक्टरी 'स्वर्णवेद फर्नीचर्स' से बनवाई जाए तो ऐसी ही नक्काशी भी आधे व्यय में हो जाए, परंतु वेदप्रकाश नहीं माने। समझौता करना उनकी प्रवृत्ति में शामिल न था।

स्वर्णलेखा तब बहुत भड़की थी। काले रंग का फर्नीचर भी कोई रखता है घर में? बाकी का ट्रिप उसने खिन्नता में ही निकाला। परंतु वेदप्रकाश का कहना था - 'दुबई तो ब्लैक गोल्ड का शहर कहलाता है। तुम्हारा कुंदन-सा बदन इस बलैकवुड पर बहुत खिलेगा, देखना तुम!'

वेद के लिए श्रीलंका, इंडोनेशिया से इबोनी काष्ठ दुबई मँगवाना और उसका अपनी पसंद से फर्नीचर बनवाना कोई मुश्किल काम न था, उनका तो व्यापार ही यही था। उनकी यह ज़िद और फिज़ूलखर्ची उसे बिल्कुल रास न आई थी। माल-जहाज़ से एक माह बाद वह मेज़ कुर्सी आई तो उसने बेमन से उन्हें गार्डन में रख दिया। परंतु वेद उन्हें गार्डन में पाकर और भी खुश हुए। ऐसी मजबूत लकड़ी ही दुबई के उबलते तापमान में बिना झुलसे अपना ध्वज फहराए रह सकती थी।

धीरे-धीरे स्वर्णलेखा का क्रोध जाता रहा। वह वेद के आने से पूर्व ही नेमुनि को कह मेज़ झाड़-पौंछ कर साफ़ करवाती और शाम की चाय की चुस्कियाँ लेते हुए जीवन की दूसरी पारी के आनंद की घड़ियाँ काली मेज़ से उतरतीं और घर भर में डेरा डाल लेतीं। सुबह की चाय और अखबार पढ़ने का ठिकाना भी गार्डन और वह मेज़-कुर्सियाँ हुईं।

उसी कुर्सी पर बैठी स्वर्णलेखा का हृदय आज दु:ख से चीत्कार रहा था। उसकी आँखें बरसाती पतनाले-सी झर-झर झर रहीं थीं। वहाँ अकेले बैठ चाय उसके दिल को जलाती थी। नेमुनि चाय ले आई। तभी स्वर्णलेखा का मोबाइल बज उठा।

"हैलो! क्या मैं वेदप्रकाश जी से बात कर सकता हूँ?" उस ओर से आवाज़ आई।

"जी... वेदप्रकाश जी तो... अब नहीं रहे। आप कौन?" स्वर्णलेखा किसी तरह स्वयं को संयत कर पाई थी।

"ओह! बहुत अफ़सोस हुआ जानकर... । पर यह हुआ कैसे? कब हुआ? अचानक...?" प्रश्नों की झड़ी ने स्वर्णलेखा के दु:ख को और बढ़ा दिया था।

"आपके पास मेरा नम्बर? ...क्या वेद जी ने दिया था?" उम्मीद की एक किरण स्वर्णलेखा के मन में कौंधी कि हृदयाघात से पहले का दिया हुआ वेद का ही कोई संदेश इन सज्जन के माध्यम से मुझे मिल जाए, जिसे वे यूँ अकस्मात चले जाने से कह न सके।

"क्षमा कीजिए मैम! मैंने तो वेदप्रकाश जी के नम्बर पर ही फ़ोन मिलाया था।... कोई सेवा हो तो याद कीजिएगा। मैं... ज्ञानदेव..." आगे ज्ञानदेव कुछ कह न सका।

स्वर्णलेखा की भी संज्ञा लौटी। वेद के जाने के बाद उसने स्वयं ही तो उनके मोबाइल का 'एतिसलात' सिम अपने मोबाइल के दूसरे सिम स्लॉट में डाल लिया था ताकि वह उन्हें अपने से जुड़ा हुआ महसूस करती रहे। आशा के विपरीत उसके दर्द को सहलाने में यह सिम सर्वथा असफल रही थी। वेद को कभी कॉल करनेवालों को यह बताना कि वे नहीं रहे, उसकी पीड़ा में सुई ही चुभो रहा था। स्वर्णलेखा ने सिम वाली नुकीली सुई से वेदप्रकाश के सिम को निकाल कर मेज़ पर रख दिया।

"बीबी जी! आप अपना जी लगाने को अपना चित्रकारी का काम फिर से क्यों नहीं शुरु करतीं?" नेमुनि, जो पास बैठी सब सुन रही थी, अचानक बोल पड़ी।

"कोशिश की थी नेमु! पर कूची मेरे मनचाहे रंगों को कैनवास पर उतार नहीं पाती। ...याकि यूँ कहूँ कि मरे मन की चाह के रंग कौन-से हैं, अपनी तूलिका को मैं ही समझा नहीं पाती। सब ओर बस काला-सा रंग बिखरा दिखाई देता है।" उसने मेज़ पर उचटती-सी निगाह डाली।

अपनी इस बात से स्वर्णलेखा स्वयं हैरान थी कि वह यह सब इस नेपाली वृद्धा को क्यों बता रही है, जिसे चित्रकारी की रत्ती भर भी समझ नहीं है। पर..., वह रंग भले ही न समझती हो, बीस साल से उसके साथ रहते हुए उसे अवश्य समझती है।

"आप बाबू जी के काम सँभालने शुरु कर दीजिए।" वह घर के बड़े-बुज़ुर्ग की भाँति ही उपदेश दे बैठी।

"हाँ नेमु! फैक्टरी जाना शुरु करूँगी अगले महीने से..." अनमनी यंत्रचालित-सी वह बोल उठी।

नेमुनि इस आश्वस्ति विज्ञप्ति को सुनकर भी आश्वस्त नहीं लग रही थी। वह सिम वाली पिन और सिम उठाकर अंदर ले गई और स्वर्णलेखा अजनबी निगाहों से उसे जाते हुए देखती रही।

स्वर्णलेखा की सोच शून्य में गुम हो गई। तीनों बेटियाँ और दामाद भी तो यही कह रहे हैं। पर क्या यह उसकी उम्र है कि वह व्यापार की ऊँच-नीच समझ ले। फर्नीचर का व्यापार तो बहुत ही भारी काम है। माना कि बचपन में वह मेधावी छात्रा थी, एम.बी.ए. भी किया है किंतु इन सबका उसे अब अभ्यास ही कहाँ है? सोचते हुए उसने चाय का कप प्लेट में रखा और शीशे-सी चिकनी मेज़ की सतह पर धूप की चमक में उभर आई अपनी आकृति

को देखा। साठ की उम्र उस आकृति की तो कतई न लगती थी। धूप की दृष्टि तो तथ्यों को स्पष्ट ही दिखाती है, फिर आज यह भ्रमित-सी मन:स्थिति क्यों हो रही है?

काले रंग पर धूल अधिक साफ़ दिखती है कदाचित् इस कारण यह भ्रमजाल पैदा हुआ हो। उसने पुन: झाड़न लिया और मेज़ की सतह झाड़ने लगी। वह जितना झाड़ती, कहीं न कहीं फिर धूल का कोई कतरा उसे व्यथित करने को बैठ जाता। खिन्नता फिर चुभने को चली आई कि इस कारण भी वह काले फर्नीचर के विरोध में थी। फिर अचानक वेद की याद आते ही वह पुन: सीलनभरी आँखों से मेज़ की दराज़ें खोल-खोलकर सफ़ाई में जुट गई। अपने अपराध उनसे क्षमा करा ले रही थी।

उन दराज़ों में उसे वेद के पत्र, डायरी, हिसाब के पर्चे और न जाने क्या-क्या मिला। आज वे दराज़ें श्याम वर्ण के दर्पण बन गईं। ऐसा दर्पण जिनमें वह अपने ही पति के व्यक्तित्व के उस पक्ष को निकटता से देख पा रही थी जो कदाचित् उनके साथ रहते न देख पाई थी। सुयोग्य साथी पर भरोसा, निज कर्त्तव्य पर विश्वास को ऐसे ही दबा देता है जैसे आबनूस का रंग अन्य सारे रंगों को दबा देता है।

बाहर धूप तेज़ हो चुकी थी, आँखें चुँधिया रही थीं। सारे कागज़ लेकर वह भीतर आ गई। कच्चा माल कहाँ-कहाँ से आता है, किस-किस कारीगर को दिया जाता है, घिसाई और पॉलिश का निपुण कौन है और क्या भाव में वह काम करता है। अब तक किस-किस से कितना काम कराया और किस-किस का लेना-देना बाकी है, मैनेजर की तनख्वाह, शोरूम का किराया, सारा हिसाब-किताब तो उनकी डायरी में साफ़-साफ़ लिखा था। 'स्वर्णवेद' फर्नीचर का दुबई के राजमहल से जारी सम्मान-पत्र, शारजाह के विश्वविद्यालय से आया प्रशस्ति-पत्र आदि उनके उच्च कोटि के ग्राहकों की संतुष्टि प्रमाणित करते थे।

वेद पिछले एक वर्ष से सामाजिक कार्यों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने लगे थे। निजी उत्तरदायित्व निभाकर वे सामाजिक उत्तरदायित्व को उन्मुख हुए थे। एक बड़ा कार्टन भरकर पेंसिल नाइज़ीरिया के लिए, खाली बची हुई कॉपियों के पन्ने सोमालिया भेजने के लिए, पुरानी साड़ियाँ सुडान की महिलाओं के लिए, बिस्कुट के पैकेट श्रीलंका के लिए, सब के बक्से फैक्टरी में रखे हुए थे। पूर्ण लेखा-जोखा इन कुछ पर्चों के काले अक्षरों में दर्ज था।

सारे पर्चे उसने करीने से मोड़कर अपने पर्स में रखे और ड्राइंग रूम में रखी अपनी अधूरी पेंटिग के सामने बैठ गई। कुछ क्षण बाद रंगमिश्रण की पटिया पर लाल, हरे, पीले रंग निकाले, तारपीन का तेल मिलाकर कूची के साथ उनकी संगत बिठाई और सूर्य की प्रत्यावर्तित किरणें बनकर मन-मस्तिष्क के रंग कैनवास पर छितराने लगे।

"बीबी जी! आज पेंटिंग?" नेमुनि अपनी मालकिन की स्फूर्ति और कला को कब से निहार रही थी।

"हाँ नेमु! यह पेंटिंग बनाने को मुझे तुम्हारे साहब ने कहा था। वे इसे भारतीय कौंसलावास के मुख्य कौंसल को उनके जन्मदिन पर उपहारस्वरूप देना चाहते थे।"

"कितनी सुंदर है न! बीबी जी! इस पेंटिंग में अँधेरे को चीरकर लौटती हुई रोशनी देख कर लग रहा है कि बाबूजी ही लौट आए हैं।" नेमुनि ताली पीटती-सी उछल रही थी। स्वर्णलेखा अपनी हमउम्र नेमुनि की ऊर्जा देखकर हैरत में थी।

"जा नेमु! सिम डालने की पिन और बाबूजी का सिम तो ले आ।" स्वर्णलेखा का चेहरा उमंग, निश्चय और आत्मविश्वास से दमक रहा था।

"हाँ बीबी जी! इसे डालकर ही रखो दूसरे स्लॉट में।" उसकी खुशी का कारण क्या था, पूछने पर शायद वह स्वयं भी न बता पाती।

"दूसरे नहीं... पहले स्लॉट में...।" सिम को अंदर धकेलते ही फ़ोन बज उठा।

"स्वर्णलेखा जी! मैं ज्ञानदेव... कौंसल जनरल साहब का पी.ए.। क्या आप कल कौंसलावास आ सकती हैं?... दरअसल बात यह थी कि वेदप्रकाश जी ने जो एक हज़ार दिरहम दिए थे हमें भूमिदेवी को भारत पहुँचाने के लिए, वे लौटाने हैं।" वे सकुचाते हुए बोले।

"लौटाने हैं? मगर क्यों ज्ञानदेव जी? क्या भूमि देवी को कुछ...?" किसी वीभत्स अंजाम की कल्पना कर स्वर्णलेखा के शब्द उसके गले में ही फँसकर छटपटाने लगे।

"भूमिदेवी तो उस हादसे में अपंग हो गईं थी तो उन्हें पहुँचाने के लिए किसी और को साथ में भारत भेजना था... उसका प्रबंध हम नहीं कर पा रहे हैं। तो बस... इसी लिए... जब कुछ इलाज होगा इस समस्या का तब देखा जाएगा।" ज्ञानदेव का स्वर निराश हो चला था।

"मैं कल आ रही हूँ ज्ञानदेव जी! मुझे कौंसल जनरल को अपनी पेंटिंग भी भेंट करनी है। और... आप भूमिदेवी के साथ मेरी टिकट करा दीजिए। मैं उनके साथ उन्हें उनके गाँव तक छोड़ आऊँगी।" दृढ़ विश्वास से लबरेज थीं स्वर्णलेखा की मुखकांति।

"लेकिन आप... आप स्वयं?" ज्ञानदेव की खुशी आश्चर्य में घुल-मिलकर छलकी।

"आप तैयारी कीजिए। और हाँ! कौंसलावास की ओर से वेद के जिम्मे के कोई काम अधूरे न रहें, इसका जिम्मा मैं लेती हूँ।"

काले रंग के दर्पण ने उसे अपने गंतव्य की दिशा दिखा दी थी। उस राह पर वेद बाँहें फैलाए हुए मुस्कुराते हुए खड़े थे।

## नारी की पहचान

**राजश्री राठी**

हृदय में है करुणा भरी
सहनशीलता की सूरत हूँ
परोपकार कर खुशियाँ बाँटती
मैं ममता की मूरत हूँ।

बाबुल के आँगन की रौनक
ससुराल का अभिमान हूँ
कर्तव्य दक्ष हर सेवा में तत्पर
मैं स्वयं में स्वाभिमान हूँ।

संघर्षों से कभी ना हारी
नित सरिता-सी मैं बहती
मिल जाए जो थोड़ा प्यार
कभी नही मैं फिर थकती।

धरा पर ईश्वर का,
साक्षात वरदान हूँ
झुलसती हुई गर्मी में
मैं शीतल-सा अहसास हूँ।

छाए दुखों के बादल तो क्या
मैं छाता लिए तैयार हूँ
हों राह फूलों या काँटों भरी
चलने के लिए बेकरार हूँ।

कभी किसी से ना हारी
चहुँ ओर मेरी ख्याति
हर क्षेत्र में कदम बढ़ाती
मैं, पर फैलाती नारी।

# चमत्कारों का सिरमौर हैं करतार

**डॉ. सन्तोष खन्ना**

यहाँ चमत्कार ही चमत्कार हैं। सबसे पहले तो यह ब्रह्माण्ड ही चमत्कार है। उसकी सृष्टि चमत्कारों का एक अनन्त अंतहीन अजूबा है। कहा जाता है ब्रह्माण्ड में अरबों आकाश-गंगाएँ हैं और प्रत्येक आकाशगंगा में करोड़ों सूर्य हैं। अभी तक आकाश-गंगाओं को नहीं गिना जा सका है सूर्य की बात तो छोड़ दीजिए। पृथ्वी पर जितने समुद्री तट हैं और वहाँ जितने बालू के कण हैं, उससे कहीं ज्यादा ब्रह्मांड में तारे हैं. यह दावा है अमरीका खगोलविद कार्ल सगन का। यह सब जान कर तो हम दाँतों तले ऊँगली दबाते बिना नहीं रह सकते। जब ब्रह्माण्ड का कोई और ओर-छोर नहीं है, तो इसका निर्माण करने वाला अद्भुत चमत्कारी ही होगा बल्कि वह तो चमत्कारों का सिरमौर होगा। वह किसी को दिखाई नहीं देता फिर भी वह है बल्कि वहीं तो है जो है। शेष सब तो माया है और वह माया भी उसी का पसारा है। वह निराकार है तो साकार भी है। उसे ही उसे जानने को प्रयासरत ऋषि मुनि 'नेति नेति' कहते हैं अर्थात् वह भी नहीं समझा पाते कि अगर वह निराकार है तो साकार कैसे हैं? साकार है तो निराकार कैसे हैं। यह ऐसी उलटबाँसी है जिसे आज तक कोई समझ नहीं पाया। पर यह तो निश्चित् है कि वह है। अब तो विज्ञान भी उसके समक्ष नतमस्तक हो कह रहा है कि वह है। संसार की हर भाषा में उसे अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है और अभी तक कोई भी भाषा उसे नाम देने के लिए कोई शब्द नहीं ढूँढ पाई जिस शब्द को जानने के बाद कुछ और जानना शेष न रहे। विश्व का यह जादुई निर्माता और नियंता कैसा अद्भुत, अनिवर्चनीय और विलक्षण होगा?

ऊपर कहा गया है कि उसने हज़ारों ब्रह्माण्ड बनाये हैं। उसने हज़ारों सूर्य बनाये हैं। हमने अपना सौर मंडल तो देखा है जिसमें सूर्य और वह खगोलीय वस्तुएँ सम्मिलित हैं जो इस मंडल में एक दूसरे से गुरुत्वाकर्षण बल द्वारा बँधे हैं। किसी तारे के इर्द-गिर्द परिक्रमा करते हुई उन खगोलीय वस्तुओं के समूह को ग्रह मण्डल कहा जाता है । इस ब्रह्माण्ड में अनेक ग्लेक्सियाँ अथवा मंदाकिनी भी हैं जिन में से हम नग्न आँखों से एकाध मंदाकिनी का जलवा देख सकते हैं। सूर्य, चाँद सितारों का जलवा तो हम रोज़ देखते ही हैं। हम जन्म के बाद होश सँभालते ही यह देख समझ लेते हैं कि सूर्य रोज़ ही गगन में पूर्व की दिशा से अवतरित हो पश्चिम दिशा में अस्त हो जाता है और वह इस नियम का कभी व्यतिक्रम नहीं करता। क्या हमेशा पूर्व दिशा से उगते-उगते वह कभी बोर नहीं होता और कभी सोचें कि क्यों न वह किसी दिन दक्षिण दिशा से उदय हो कर देखे। पर नहीं, वह हमेशा प्रकृति के नियमों का पालन करता है । फिर, इस सौर मंडल में तो पृथ्वी जैसा हमारा भी अद्भुत ग्रह भी है जो सूर्य और अन्य ग्रहों की तरह निरंतर घूम रहा है। पृथ्वी सूर्य के इर्द-गिर्द तो चक्कर लगा ही रही है, वह अपनी धुरी पर घूम रही है। उसके साथ पृथ्वी से चिपके हम भी घूम रहे हैं परंतु उस पर चमत्कार यह कि हमें लगता ही नहीं कि हम भी घूम रहे हैं। अंतरिक्ष में लटकी और घूमती पृथ्वी से हम नीचे नहीं गिरते। हम क्या, विशाल और अपार समुद्र में अथाह जल राशि है परंतु अंतरिक्ष में लटकी पृथ्वी के सातों समुद्रों से जल की एक बूँद भी बाहर नीचे नहीं गिरती। विशाल और अथाह जलराशि को किसने बाँध रखा है? यही समुद्र जब क्रुद्ध होते हैं तो पूरी धरती को जल-थल कर देते हैं तब प्रलय आ जाती है । बाद में यही सिंधु अपना समूचा जल स्वयं में वापस समेट लेते हैं। यह सब चमत्कार से किसी तरह भी कम नहीं है। पृथ्वी ने हमें अपनी पूरी पकड़ में ले रखा है जैसे माँ अपने बच्चों को

अपनी गोद में सुरक्षित रखती है। हम तभी तो पृथ्वी को माँ वसुंधरा कहते हैं, कहते ही नहीं मानते भी हैं इसलिए उसकी पूजा भी करते हैं। हम सूर्य की भी पूजा करते हैं। वह भी तो रिश्ते में हमारा नाना लगता है क्योंकि हमारी यह धरा उसकी पुत्री है। चाँद हमारे मामा हैं क्योंकि पृथ्वी और चाँद दोनों ही सूर्य के जाये हैं अर्थात् सूर्य ही उनका जनक है और दोनों को प्रकाश सूर्य से ही मिलता है यानि सूर्य ही पृथ्वी की ट्यूबलाइट है। जब सूर्य अस्त हो शेष पृथ्वी की ट्यूबलाइट बनने के लिए जाता है तो जाते-जाते हमारी तरफ चाँद के रुप में ज़ीरो का बल्ब जगा जाता है और हमें चाँद की चाँदनी और शीतलता में सुरक्षित कर जाता है।

यही नहीं, हमारे सौरमंडल का सूर्य क्या-क्या चमत्कार करता है कि उसका वर्णन करना ही कठिन है तो ब्रह्माण्ड तो हमारी इस मोटी बुद्धि की पकड़ में आ ही नहीं सकता। सूर्य पृथ्वी पर मनुष्य, पशु पक्षियों और पेड़-पौधों को जल आपूर्ति के लिए अपनी किरणों की पाइपों से समुद्र से जल भर कर आकाश में ला कर उसे बादलों की पीठ पर रखता जाता है और फिर उन बादल-समूहों को भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में रवाना करता जाता है जहाँ यह बादल जा कर जल आपूर्ति की व्यवस्था करते हैं। जल आपूर्ति करते समय सूर्य दो बातों का ध्यान रखता है - पहला, वह अपनी किरणों की पाइपों में छलनियाँ फिट कर देता है जिनसे वह खारे पानी को छानता जाता है ताकि जब वह पृथ्वी पर वर्षा करके जल सप्लाई करें तो वह जल मीठा और शुद्ध होना चाहिए। दूसरा, सबको बारहमासी जल आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए उसने ऊँचे-ऊँचे पर्वतों पर विशाल आकार के फ्रिज फिट कर रखें हैं जिनमें वह अतिरिक्त जल को बर्फ के रूप में जमाता जाता है जो वहाँ विशाल हिमखंड बन सुरक्षित पड़े रहते हैं और धीरे-धीरे पिघल कर नदियों के माध्यम से मानवता की जल सम्बंधी जरूरतों को निरंतर पूरा करते रहते हैं। पूरी धरती पर ऊँचे-ऊँचे पर्वतों पर हिमखंडों के अम्बार लगे हैं और धरती के कोने-कोने में अनेक नदियों का जाल बिछा है। सूर्य से हमें सीखने की जरूरत है कि हम जल जैसे बहुमूल्य संसाधन को नष्ट न करें। सूर्य यह सुनिश्चित् करता है कि नदियों में वह जो जल प्रवाहित करता है वह धरती पर सबके काम आये और अगर उनकी जरूरत पूरी करने के बाद जो अतिरिक्त जल बचता है तो उसके लिए उसने नदियों को निर्देश दे रखा है कि अतिरिक्त जल पुनः समुद्र को सौंप दें। नदियाँ उसी नियम के अनुसार सागरों में जा कर मिल जाती हैं और सदैव अपना धर्म निभाती हैं।

आजकल सुना है कि भूमंडलीय ऊष्मीकरण से बर्फ के यह हिमखंड अधिक ताप के कारण पिघल रहे हैं जिसके कारण स्थान-स्थान पर अप्रत्याशित बाढ़ें तबाही मचा रही हैं और अगर इसे रोका न गया तो समुद्रों में जल-स्तर बढ़ जायेगा और विश्व के अनेक शहर डूब जायेंगे, दूसरे शब्दों में मानवता का अस्तित्व ही खतरे में है। मानव इसे रोक सकता है पर उसके लिए उसे अपने जीवन में संयम, सदाचार और अनुशासन का संचार करना होगा। अभी तो वह जिस डाल पर बैठा है, उसी को काटता जा रहा है।

खैर, यह जगत्, सृष्टि अथवा ब्रह्माण्ड कब अस्तित्व में आया, कोई नहीं जानता। अगर किसी कालखंड में ब्रह्माण्ड नहीं था तो भी तब स्पेस अथवा अंतरिक्ष तो होगा ही जिसमें उस विभु से अपने एक इशारे से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड रच डाला। फिर प्रश्न उठता है कि यह स्पेस अथवा अंतरिक्ष भी तो उसी ने बनाया होगा? फिर यह भी कहा जाता है कि इस ब्रह्माण्ड का निर्माण पाँच तत्वों से हुआ है। तुलसीदास ने अपने महाग्रंथ 'रामचरित मानस' में इसे यों व्यक्त किया है -

'क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा,

पंच तत्व यह अधम शरीरा।'

यह ब्रह्माण्ड पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और पवन से निर्मित हुआ है किंतु परमात्मा ने इसे कैसे बनाया, कोई नहीं जानता। वह कितना बड़ा कल्पनाकार है, किसी को भी इसका अंदाजा नहीं है।

इन पाँच तत्वों के बारे में अब विज्ञान बहुत कुछ जान गया है और मान गया है कि इन चमत्कारी तत्वों को निर्मित करने वाली एक शक्ति अवश्य है और कुछ वैज्ञानिकों ने कहा है कि उन्होंने 'गॉड पार्टिकल' का पता लगा लिया है। ये वैज्ञानिक उस विभु के अज्ञात चमत्कारों के रहस्यों को जानने के लिए सतत सक्रिय हैं। यह वैज्ञानिक अर्थात् मानव जैसे अद्‌भुत प्राणी को किसने बनाया? कहा जाता है कि 'Humans are the best creation of God.' मानव उस विभु की सर्वोच्च एवं सर्वोत्तम रचना है। मानव की रचना करने का विचार अथवा कल्पना उसके विज़न अथवा अंत:-दृष्टि में क्यों कर आई? उसने असंख्य कोटि के मानव बनाये, शरीर का आकार-प्रकार एक जैसा परंतु शक्ल सूरत सब की अलग-अलग है और उस पर आश्चर्यों का भी आश्चर्य यह कि उसने पुरुष बनाया तो नारी को भी बनाया बल्कि उसे पुरुष की तुलना में अधिक सौंदर्यशाली और शक्तिशाली बनाया, शक्तिशाली इस रुप में कि उसे मानवता की जननी और पोषणहार बनाया। उसने संतान के लिए उसमें ममता तत्व का समावेश किया तो शिशु आहार का स्रोत भी उसे ही बनाया। इस प्रकार की सर्वोच्च कोटि की इंजीनियरिंग का आविष्कार कर एक और चमत्कार भी किया। यही नहीं, उसने मानव में न केवल अनेक प्रकार की भावनाओं का संचार किया है बल्कि उसे बुद्धि और विवेक की क्षमता भी प्रदान की है और 'चयन का अधिकार' भी उसे दिया है। इन गुणों का उपयोग कर मनुष्य अपने परिश्रम, संयम, त्याग और तपस्या से भौतिक उपलब्धियाँ अपनी मुट्ठी में कर लेता है, अगर वह सही रास्ता चुने तो आध्यात्मिकता का वरण कर अपना जीवन सार्थक कर सकता है। साधना से वह इस ब्रह्माण्ड के निर्माता और नियंता शिव-तत्व को जान सकता है और मोक्ष भी प्राप्त कर सकता है। आत्मा के रूप में शिव-तत्व का भी अंश उसमें विराजमान हैं। तभी तो तुलसीदास ने राम चरित मानस के उत्तर काण्ड में कहा है – "ईश्वर अंश जीव अविनाशी। चेतन अमल सहज सुख रासी।"

अर्थात् मानव ईश्वर का अंश है इसलिए वह भी ईश्वर के समान ही अविनाशी, चेतन, निर्मल और स्वभाव से सुख की राशि है। जब मनुष्य उसी का अंश है अर्थात् उसकी यह आत्मा अजर और अमर है। भगवान कृष्ण ने भागवत् गीता में आत्मा के बारे में जो ज्ञान दिया है, उससे सब अच्छी तरह से परिचित हैं। उन्होंने कितने सुंदर शब्दों में इसके बारे में बताया है -

'नैनं छिद्रन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक: । न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुत॥'

ये गीता जी के दूसरे अध्याय का श्लोक है इसमें बताया गया है कि आत्मा को कोई शस्त्र काट नहीं सकता, आग जला नहीं सकती, पानी भिगो नहीं सकता, हवा सुखा नहीं सकती। आत्मा शरीर बदलती है, कभी मरती नहीं है. क्योंकि आत्मा अजर-अमर है।

बेशक पाँच तत्व का शरीर नष्ट होता है पर जब तक आत्मा उसमें प्राणवान् है वह शिव सदृश होता है, जरुरत इस बात की होती है कि मानव अपने इस शिव तत्व को पहचाने।

वास्तव में मानव को यह अनमोल जीवन मिलता ही इसी लिए है कि वह ईश्वर या शिव तत्व के बारे में अपनी साधना से शोध कर उसके स्वरूप को उजागर कर सके। साधना की बात आती है तो साधना का रास्ता मायावी माया रोकती है । कबीर ने कहा है 'माया महा ठगनी हम जानी '। इससे पार पाना सुगम नहीं है पर मनुष्य में बुद्धि, विवेक और संकल्प की अथाह शक्ति होती है। उसे स्वयं को पहचानना होगा, इस सम्बंध में मेरी एक कविता की पंक्तियाँ पढ़िये और खुद को पहचानिए -

मेरा आकार है बेशक लघु<br>
पूरे ब्रह्मांड-सी हस्ती हूँ मैं<br>
मैं संगीत में हूँ, सुरों का साज हूँ मैं

सुर में दिव्य संगीत हूँ मैं
कवितत्व में कविता हूँ
कविता में कवितत्व हूँ
मैं अक्षर हूँ, मैं शिव हूँ
शिव का शिवत्व भी मैं हूँ।

## अब तमाशा वफ़ा का नया कीजिए

### डॉ. आशीष कंधवे

अब तमाशा वफ़ा का नया कीजिए
ज़ख़्म फिर से हमारा हरा कीजिए
एक चिंगारी घर के मेरे है क़रीब
आप चाहें अगर तो हवा कीजिए
शाख पर एक जोड़ा है हँसता हुआ
पत्थरों से उसे मत जुदा कीजिए
सिर्फ़ खुशियों की अफवाह पर दोस्तों
बेपरों की तरह मत उड़ा कीजिए
आप अब हैं हवा की निगाहों में तो
हौसला ले के दिल में चला कीजिए
आँख से गर ये आँसू बहे तो बहे
याद में उसकी अक्सर रहा कीजिए ।

# डिजिटलीकरण और हिन्दी

**वीरेंद्र कुमार यादव**
(विश्व हिन्दी दिवस के प्रस्तावक, सह हिन्दी सलाहकार समिति, भारत सरकार)

समस्त विश्व में आदिकाल से ही सूचना का महत्त्व जाना और माना जाता है। प्रसिद्ध लेखक द्वय (पति पत्नी) ऐल्विन तथा हाडी टॉफलर ने सभ्यता की लहरों को तीन चरणों में विभाजित किया है। प्रथम चरण था "कृषि लहर", का जिसमें कृषि व्यवस्था ही प्रधान थी। कृषि लहर की कालावधि सबसे अधिक है क्योंकि यह लहर आदिकाल (लगभग ६०००ई.पू.) से उन्नीसवीं शताब्दी तक, अर्थात् लगभग ७९००वर्ष तक रही। यूरोप में हुई औद्योगिक क्रांति ने सभ्यता की दूसरी लहर "औद्योगिक लहर", को जन्म दिया जिसकी कालावधि १५० वर्ष से कुछ अधिक कही जा सकती है।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में इलेक्ट्रॉनिक नामक एक नई विधा ने जन्म लिया जिसने दूरसंचार व्यवस्था को एक शक्तिशाली माध्यम दिया। इस नवीन संचार व्यवस्था ने मानव जीवन शैली में ही आमूल-चूल परिवर्तन कर दिया। आधुनिक संचार व्यवस्था का स्वरूप अंकीय (डिजिटल) है जो स्वयं द्वि-आधारी (बाइनरी) संख्या पर आधारित है। ये द्विआधारी संख्याएँ हैं (०) तथा (१)। इन नवीन डिजिटल संचार व्यवस्था ने सूचना समाज को जन्म दिया। टॉफलर युगल ने इसे सभ्यता का तीसरा चरण कहा है। यह लहर है "सूचना लहर"।

अंक गणित, विशेष रूप से १ से ९ तक के अंकों को विश्व समाज अरब देश की देन मानता है। किंतु स्वयं अरबवासी ये मानते हैं कि उन्होंने १ से ९ तक के अंकों को लिखने का ढंग भारत से सीखा है। इन अंकों का उपयोग भारतीय व्यापारी अरबों के साथ लेन-देन के समय करते थे। इसलिए अरबी भाषा में अंकों को हिंदसा (हिन्द + असा) और अंकों को इस प्रणाली को हिसाब-हिंदी कहते हैं। असा एक भारतीय का नाम था जिसने अरब व्यापारियों को प्रथम बार इस अंक से परिचित कराया। यूरोप के साथ व्यापार करते समय अरबों ने इसी प्रणाली का प्रयोग किया तो यूरोप वासियों ने इन अंकों (१ से ९ तक) को अरबवासियों की देन मान लिया।

जब आर्यभट्ट ने विश्व को शून्य (०) अंक दिया तब तो समस्त विश्व में व्यापारिक लेन-देन बहुत ही सरल हो गया।

गणित, ज्योतिष और ज्यामिति तथा अन्य विज्ञान प्रारम्भ से ही इस अंक विधा के ऋणी रहे हैं और, डिजिटल प्रणाली तो इस पर पूर्ण रूप से आधारित है। मेरे विचार से यदि आर्यभट्ट के काल में पेटेंट प्रणाली प्रचलित होती और यदि भारत ने "शून्य" का पेटेंट करा लिया होता तो आज सूचना प्रौद्योगिकी के आधे से अधिक आविष्कारों पर भारत का अधिकार होता।

सूचना प्रौद्योगिकी का एक अन्य महत्वपूर्ण आधार हैं "भाषा"। यदि सूचना किसी ऐसी भाषा में प्राप्त हो जो पाने वाले के लिए अजनबी हो, तो ऐसी सूचना मिलना व्यर्थ ही है। वैसे तो भारत में अनेक भाषाएँ हैं, किन्तु भारत की सम्पर्क भाषा हिंदी है।

किसी देश का सर्वांगीण विकास उस देश की भाषा एवं प्रौद्योगिकी पर निर्भर करता है। एक प्रकार से यह भी कहा जा सकता है कि भाषा प्रौद्योगिकी का विकास पारस्परिक रूप से एक दूसरे पर निर्भर है। इस तथ्य को समझने के लिए हमें जर्मनी, जापान एवं फ्रांस जैसे विकसित देशों एवं चीन जैसे तेजी से विकास की ओर बढ़ते हुए देश की वेबसाइट देखना आवश्यक है। इन देशों की अपनी राष्ट्रभाषा है, जिसमें इन्होंने अपनी वेबसाइट की संरचना की है। लाखों व्यक्ति प्रतिदिन देखते हैं और इन के माध्यम से व्यापार करते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वैश्विक व्यापार की गति बढ़ने से इनकी भाषा का समुचित विकास होता है। इन देशों के साथ व्यापार करने के लिए अन्य देशों को भी उनकी भाषा सीखनी पड़ती है। यह उनकी सरकार की नीति है कि उनके उद्योगपति

एवं व्यापारी अपनी वेब साइट अपनी ही भाषा में बनाएँ। हाल ही में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार चीनी भाषा की वेब साइट विश्व की विशालतम वेबसाइट बन जाएगी। क्या कभी ऐसी कोई राजनीति भारत में भी बन सकेगी।

यह हर्ष का विषय है "इंडियन स्टैन्डर्ड कोड फॉर इन्फॉर्मेशन इंटरचेंज" (आई.एस.सी.आई.आई.), 'इस्की' नाम से एक ऐसी मानक कूट प्रणाली का विकास किया गया है जिसके अंतर्गत भारतीय भाषाओं और लिपियों के साथ-साथ दक्षिण पूर्व एशिया एवं यूरोप की विभिन्न भाषाओं सहित रोमन लिपि समाहित है। इस प्रकार रोमन लिपि के लिये विकसित "अमरीकन स्टैंडर्ड कोड फॉर इन्फॉर्मेशन इंटरचेंज" (ए.एस.सी.आई.आई.) "आस्की" को भी "इस्की" ने अपना एक घटक बना लिया है। निश्चय ही इस प्रयास से सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी सहित समस्त भारतीय भाषाओं को आगे बढ़ाने का रास्ता खुल गया है। अब आवश्यकता है भारतीय राजनेताओं, सरकारी अधिकारियों, उद्योगपतियों तथा शिक्षाविदों को अपनी मानसिकता बदलने की। उर्दू को छोड़कर अन्य भारतीय भाषाओं की लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से विकसित हुई है। अपने मूल स्वरूप में तो अक्षरात्मक है किंतु उसकी वर्णमाल ध्वन्यात्मक (फ़ोनेटिक) है और उनका क्रम समान है। आई.आई.टी कानपुर द्वारा भारत सरकार की एक परियोजना के अंतर्गत विकसित ग्राफिक्स एंड स्क्रिप्ट टेक्नोलॉजी का एक प्रोटोटाइप विकसित किया गया था। प्रौद्योगिकी का समुचित विकास हो चुका है और यह काफी सक्षम एवं समर्थ बन चुकी है।

इंटरनेट के आगमन के पश्चात् तो भारतीय भाषाओं की राह और जटिल होती गई। इंटरनेट के माध्यम से कोई भी सामग्री तत्क्षण विश्व के किसी भी कोने में पहुँच सकती थी और पढ़ी जा सकती थी। लेकिन यह कार्य किसी भी भारतीय भाषा में सम्भव नहीं था। क्योंकि प्रारम्भ में यूनिकोड फ़ॉन्ट्स की व्यवस्था अँग्रेजी सहित कई यूरोपीय भाषा तक ही सीमित थी। लम्बे समय तक हम भारतीय भाषाओं के लिए यूनिकोड की उपलब्धता की प्रतीक्षा में रहे। उद्योग जगत हो, व्यवसाय जगत हो या सेवा के अन्य क्षेत्र, सभी ने अँग्रेजी यूनिकोड को अपना लिया।

इंटरनेट के पसरते जाल को यदि आँकड़ों के चश्मे से देखें तो पता चलता है कि विश्व में अंतर्जाल यानी इंटरनेट का प्रयोग करने वालों की संख्या लगभग ३.१७ अरब है, शारीरिक रूप से अक्षम लोगों की संख्या घटा दिया जाए तो यह प्रतिशत और बढ़ जाता है। अशिक्षित या आर्थिक कारणों से इंटरनेट तक पहुँच न रखने वाले लोगों को भी इस संख्या से घटा दिया जाए तो शेष लगभग पूरा विश्व आज इंटरनेट के जाल में आ चुका है। दुनिया के इस प्रबलतम संचार माध्यम से दुनिया समग्रता के साथ जुड़ रही है। १९९१ तक एक भी वेबसाइट नहीं थी लेकिन अब करीब १०० करोड़ वेबसाइट रजिस्टर्ड हैं जो दिन-प्रति-दिन बढ़ रही है। इंटरनेट का नेटवर्क हटते ही तमाम आर्थिक गतिविधियाँ रुक जाती हैं।

भाषा आज कागजों से निकलकर इंटरनेट की दुनिया में अपना मजबूत आधार बना चुकी है। अब भाषा के प्रसार का पैमाना कागजी दुनिया नहीं बल्कि इलेक्ट्रॉनिक तरंगों की दुनिया है। साहित्य और ज्ञान विज्ञान भी पुस्तकों से निकलकर तेजी के साथ के दायरों से बाहर निकलकर साहित्य ने ई-पत्रिकाओं और सोशल मीडिया पर अपना नया ठिकाना खोज लिया है। यहाँ कोई भी रचनाकार घर बैठे दुनिया के किसी भी कोने में साहित्य प्रेमियों तक अपनी रचना क्षण-भर में निर्बाध रूप से पहुँचा सकता है। यही नहीं अंतर्जाल यानी इंटरनेट की दुनिया में बने सोशल मीडिया ने साहित्य जगत् को एक महासागर रूपी एक ऐसा अनंत महासागर है जहाँ चौबीसों घंटे साहित्य प्रेमी साहित्य का रसास्वादन कर रहे हैं। श्रव्य-दृश्य सुविधाओं से लैस होने के और संगोष्ठियों के विकल्प के रूप में भी प्रस्तुत कर रहा है। अपनी रचनाओं को पाठकों तक पहुँचाने के लिए आर्थिक सीमाओं व प्रकाशकों पर निर्भरता समाप्त हो रही है जिसके चलते साहित्य अलमारियों में रखी अक्सर धूल खाती पुस्तकों से निकलकर इलेक्ट्रॉनिक तरंगों के रथ पर सवार होकर देश के कोने-कोने में साहित्य के प्रसार की वाहक बनी हुई है। हालाँकि देश में इस समय हिंदी ज्ञान-विज्ञान और अनेक रूपों में हिंदी की स्थिति का जायजा लेना हो तो हमें दुनिया के अन्य देशों की इंटरनेट पर मुकाबले भारत की उपस्थिति तथा विश्व की दूसरी भाषाओं के मुकाबले भारत की प्रमुख भाषा हिंदी की स्थिति को समझना होगा।

भारत, चीन के बाद इस समय इंटरनेट का इस्तेमाल करने वालों की संख्या की दृष्टि से विश्व का दूसरा बड़ा देश है। ३०करोड़ से भी अधिक संख्या के साथ इंटरनेट प्रयोगकर्ताओं में चीन के बाद भारत दुनिया में दूसरे नम्बर पर है। प्रतिशत की दृष्टि से चीन में २१.९७%, अमेरिका में ९.५८% के बाद ८.३३% के साथ भारत तीसरे नम्बर पर है और इसकी वार्षिक वृद्धि-दर करीब १६% है। लेकिन प्रयोगकर्ताओं की प्रतिशत की दृष्टि से भारत इन देशों में भी सबसे नीचे के पायदान पर है। इंटरनेट का इस्तेमाल करने वालों की संख्या की दृष्टि से भारत विश्व का दूसरा बड़ा देश होने के बावजूद यदि इंटरनेट पर भारत की प्रमुख और विश्व की अग्रणी भाषा हिंदी की स्थिति को देखें तो चौंकाने वाले आँकड़े सामने आते हैं। भाषावार स्थिति देखें तो ज्ञात होता है कि अँग्रेजी ५५.५%के साथ शीर्ष पर है और उसके बाद रूसी भाषा ५.९% के केटालन का स्थान है। इंटरनेट पर जिसकी सामग्री ०.१% है। लेकिन हिंदी की स्थिति ०.१% से भी कम है और दुनिया की अनजान-सी भाषाएँ भी इस मामले में हिंदी से काफी आगे हैं। यह स्थिति भी तब है जबकि इंटरनेट का प्रयोग करने के मामले में भारत दूसरे स्थान पर है।

आवश्यकता इस बात की है विश्व की भाषा और उनके बोलने वालों की संख्या के अनुपात में हिंदी बोलने वालों की तादाद और इंटरनेट पर भारत की प्रभावी उपस्थिति के बावजूद हिंदी और भाषा के साहित्य के पिछड़ने के कारणों की मीमांसा करते हुए सुधार के उपायों पर विचार किया जाए।

भारत जैसे देश में जहाँ मुश्किल से चार-पाँच प्रतिशत लोग अच्छी तरह अँग्रेजी जानते हैं। ऐसे में पूरे देश को तमाम सुविधाओं-सेवाओं से लाभान्वित के लिए आवश्यक है कि ये तमाम सुविधाएँ देश की भाषा में हों और देश के लोग अपनी भाषा में इनका प्रयोग कर सकें। लेकिन अँग्रेजी के वर्चस्व और भारतीय भाषाओं में उक्त सुविधाओं के अभाव के चलते आज भी हम इनका समुचित लाभ नहीं उठा पा रहे है।

भारत जैसे देश में जहाँ अँग्रेजी जाननेवालों की संख्या बहुत कम है और हिंदी जानने वालों की संख्या बहुत अधिक होने के बावजूद इंटरनेट और सोशल मीडिया पर हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के पिछड़ेपन से एक बात स्पष्ट होती है कि आज भी इंटरनेट का विस्तार मुख्यत: महानगरों तक ही है जहाँ अपेक्षाकृत अँग्रेजी का चलन अधिक है। आज भी देश की अधिकांश जनता इन सेवाओं से दूर है। हालाँकि इस मामले में विश्व में भारत को अग्रिम पंक्ति में लाने के लिए भारत सरकार ने देश में डिजिटल-इंडिया योजना प्रारम्भ की है। इसी क्रांति को मूर्त रूप देने और भारत के विकास की गति को तीव्र गति प्रदान करने के लिए उठाया गया यह एक महत्वपूर्ण कदम है। डिजिटल इंडिया के माध्यम से सरकार की गाँव-गाँव तक इंटरनेट सर्वसुलभ और उसका अभ्यास करवाते हुए उस भाषा सम्बंधी कार्य, उसका प्रयोग करवाया जाए क्योंकि सभी भारतीय भाषाओं द्वारा साझा रणनीति बनाए जाने की आवश्यकता है।

अब जबकि पूरी दुनिया डिजिटल आकार ले रही है, देश दुनिया की तमाम सेवाएँ सुविधाएँ धीरे-धीरे ऑनलाइन हो कर अंतर्जाल में समा रही है, बहुत कुछ ऑनलाइन हो चुका है और सरकार की डिजिटल इंडिया नीति के चलते ही बहुत कुछ ऑनलाइन होने जा रहा है। बिना इंटरनेट के दुनिया की गाड़ी का पहिया चल नहीं सकेगा। इसलिए यथार्थ को स्वीकार करते हुए यथार्थ की दुनिया से आभासी दुनिया यानी वर्चुअल वर्ल्ड की तरफ बढ़ते हुए दुनिया के साथ कदमताल करनी होगी। गति के सोपानों को छूने के लिए ज्ञान-विज्ञान की नई चुनौतियों और आयामों से तालमेल बनाती आगे बढ़ने के लिए डिजिटलीकरण, सूचना प्रौद्योगिकी के नवीनतम स्वरूपों को अपनाते हुए हिंदी व भारतीय भाषाओं में इसको करते हुए हिंदी का समावेश किया जाए। नए युग की आवश्यकताओं को समझते हुए हिंदी के प्रयोग व प्रसार को उत्तरोत्तर आगे बढ़ाने के लिए दीर्घकालीन नीति बनानी होगी।

आज भी देश में प्रायः ऐसी व्यवस्था नहीं है कि स्कूल में विद्यार्थियों को कंप्यूटर आदि उपकरणों व सूचना प्रौद्योगिकी की शिक्षा देते समय ही हिंदी व भारतीय भाषाओं में कार्य के लिये निर्मित उन्नत एवं वैज्ञानिक इनस्क्रिप्ट की-बोर्ड का प्रशिक्षण दिया जाए। नतीजतन कोई व्यक्ति भले ही उसे अँग्रेजी का अति अल्प-ज्ञान हो वह भी देखकर रोमन की-बोर्ड की मदद से हिंदी को भी रोमन में टंकित करता है, इसलिए भारत के सभी स्कूलों में

माध्यमिक स्तर पर सूचना प्रौद्योगिकी शिक्षा के अंतर्गत हिंदी अथवा किसी भी भारतीय भाषा में इन्स्क्रिप्ट की-बोर्ड का विधिवत् प्रशिक्षण दिया जाए।

टेक्स्ट यानी विषय-सामग्री को डिजिटल रूप में लाए बिना राजभाषा हिंदी के प्रयोग और प्रयास को बढ़ाना कठिन ही नहीं, वर्तमान दौर में लगभग असम्भव-सा है। इसलिए मैं ये कहूँगा कि किसी भी कार्यालय में कोई भी व्यक्ति किसी भी पद पर क्यों न हो, उसके लिए आवश्यक है कि वह कंप्यूटर आदि पर हिंदी टंकण कार्य अवश्य सीखें। यदि बड़े अधिकारी जिनके पास टाइपिंग सीखने का समय नहीं है तो वे माइक्रोसॉफ्ट इंडिया इनपुट टूल डाउन लोड करके रोमन लिपि के माध्यम से भी हिंदी में कर सकते हैं।

सबसे अंतिम बात, हिंदी के विकास में सबसे बड़ी बाधा यहाँ के नौकरशाहों और राजनेताओं की हिंदी विरोधी मानसिकता ही है। माइक्रोसॉफ्ट जैसी बड़ी कम्पनी भी चीन की बात ही छोड़िये जब कोरिया और थाईलैंड जैसे छोटे से देशों के लिए भी अपने ऑपरेटिंग सिस्टम या सॉफ्टवेयर निकालती हैं तो उन्हें वहाँ की स्थानीय भाषा के विकास का विकल्प उपलब्ध कराती हैं। दूसरी ओर इतने बड़े देश के लिए हिंदी का विकल्प उपलब्ध नहीं कराने में इतना समय लिया गया।

इसकी वजह हमारी सरकारों और उच्च अधिकारियों का उपेक्षापूर्ण रवैया ही है। इसके लिए राष्ट्रीय सोच बनाने की आवश्यकता है एवं मानसिकता बदलने की आवश्यकता है।

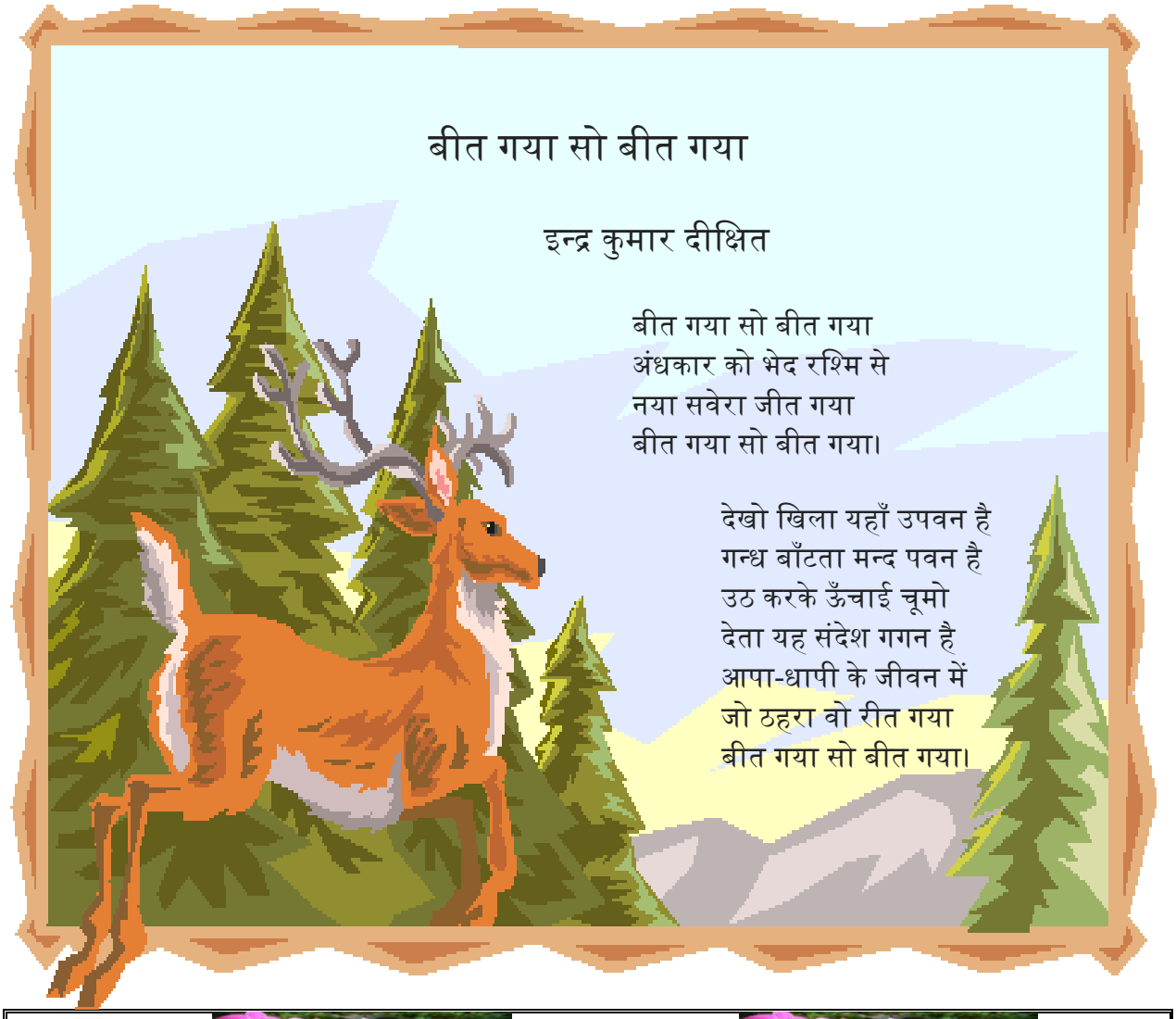

जहाँ खड़े हो पहले उससे
कुछ आगे बढ़ना सीखो
ठेठ पुरातन सोच बदलकर
नये बिम्ब गढ़ना सीखो
गाओ नये तराने, छेड़ो
सुर संगीत नया
बीत गया सो बीत गया।

चक्रवात कितने आयेंगे
सही डगर से भटकायेंगे
पर न डिगे यदि कदम तुम्हारे
बाल न बाँका कर पायेंगे
पथ न छोड़ना गाते जाना
तरुणाई का गीत नया
बीत गया सो बीत गया,
बीत गया सो बीत गया।

# संयुक्त परिवार - बरगद की छाँव

अंकुर सिंह

जब मैं घर से ऑफ़िस के लिए निकलता हूँ तो रास्ते में मोड़ पर एक बरगद का पेड़ पड़ता हैं, लगता है कि बरगद का पेड़ मुझसे कुछ कहता है। बरगद का पेड़ जैसे-जैसे पुराना होता जाता है, ठीक वैसे-वैसे उसकी जड़ काफी मजबूत और उसके छाँव की सीमा फैलती जाती है।

यह बरगद का पेड़ मुझे अतीत के संयुक्त परिवार की याद दिलाता है, वही संयुक्त परिवार जिसमें परिवार का सबसे बड़ा सदस्य एक बरगद की पेड़ की तरह होता है, जैसे-जैसे परिवार बढ़ता जाता है, उस बरगद रूपी परिवार के मुखिया की छाया भी परिजनों पर बढती जाती थी और अनुभव रूपी जड़ परिवार का आधार मज़बूती से बाँधे रहता था ।

सच कहूँ तो आज के दौर में कई एकल परिवार को देखता हूँ तो मन व्यथित हो उठता है कि ना इस परिवार को अनुभव से परिपूर्ण बड़ों की छाँव मिल पाती है, ना ही समाज से कटने के कारण इन्हें कृष्ण जैसा कोई दोस्त, जो सारथि बन पथ के हर पग पर उचित कर्म का बोध कराये। माना आज के अर्थवादी युग में परिवार के सभी सदस्यों का स्व-आश्रित होना बहुत जरूरी हैं, (मेरा खुद का मानना है कि होना भी चाहिए, क्योंकि स्थिति और हालात कब और कैसे हो जाएँ कुछ कहा नहीं जा सकता) लेकिन क्या परिवार रूपी गाड़ी के दोनों पहियों (पति-पत्नी) इस अर्थरूपी दुनिया में दौड़ने के लिए गाड़ी की स्टेरिंग (परिवार के मुखिया) की जरूरत नहीं पड़ेगी? पड़ेगी, ज़रूर पड़ेगी मैं अपने कई दोस्तों को देखता हूँ कि पति-पत्नी दोनों सुबह-सुबह रोज़ी-रोटी के जुगाड़ में घर से निकल लेते हैं और उनका नन्हा-सा बालक एक अनजान आया (काम वाली बाई) के पास रहता है, क्या वह आया (कुछ को छोड़ कर) वो संस्कार दे पायेगी जो दादा-दादी और नाना-नानी से मिलता था। मेरे अनुभव के आधार पर बिल्कुल नही।

माना आज की मूल जरूरतें और बच्चों के महँगे होते उच्च शिक्षा को पूरा करने के लिए पति-पत्नी दोनों का रोज़गार-परक होना बहुत जरूरी है, लेकिन इस भाग-दौड़ भरी जिंदगी में उस नन्हें बालक को दादा-दादी और नाना-नानी के प्यार से वंचित करना क्या उचित हैं ? हम अपने साथ कभी ससुराल पक्ष तो, कभी मायका पक्ष के वरिष्ठ जनों को अपने पास रख सकते हैं, जिससे वो हमारी संतान को उचित परिवेश और संस्कार दे सकें, और उनकी वृद्धावस्था भी उनके नाती-पोते के साथ आनंदमय तरीके से बीत सके और परिवार के वरिष्ठ जनों के चेहरों पर मधुर मुस्कान भी बनी रहे।

मेरा मानना है कि जैसे बरगद की जड़ ज़मीन की तरफ ही जाती हैं वैसे ही इंसान को भी अपने आने वाली पीढ़ियों को अपने पैतृक स्थान से जोड़ कर रखना चाहिए और उनका परिचय और मिलाप वहाँ के लोगो से कराते रहना चाहिए।

खुद के अनुभव से कह सकता हूँ कि इस अर्थ रूपी युग में जितना हो सके अपने सारथि रूपी मित्र कृष्ण और सगे-सम्बंधियों के लिए भी समय निकालना चाहिए, क्योंकि जरूरत और समय पर वे ही काम आते हैं। मैं

अपने मित्र रामभरत को देख रहा हूँ, मित्र रामभरत एक उच्च शिक्षा के बाद एक मल्टीनेशनल कम्पनी में कार्यरत हैं। और एक दिन रामभरत की तबियत अचानक ख़राब हो जाती है और डॉक्टर उन्हें इलाज के लिए बड़े महानगर में जाने की लिए सलाह देते हैं। रामभरत के पास पैसे की कोई कमी नहीं है, कमी है तो बस अपनों की। रामभरत ने अपनी जिंदगी बस पैसे कमाने में बिता दी। ना कभी अपने मित्रों या रिश्तेदारों से मिलना उचित समझा, ना ही कभी फ़ोन कर के हाल-चाल लेना ज़रुरी समझा।

इसलिए बरगद रूपी पेड़ की तरह अपने अभिभावक के अनुभव का खुद फायदा उठायें, उन अनुभवों का संचार अपने बच्चों में भी संचरित होने दीजिए और किसी बहाने, चाहे कोई कार्यक्रम हो, चाहे कोई त्यौहार हो, अपने सगे-सम्बंधी को अपने होने का भी अहसास कराते रहिए। अपने आपको रामभरत मत बनने दीजिए, याद रखिये साल २०११ के एक रिपोर्ट के अनुसार देश में हर ४ मिनट में कोई एक नागरिक ख़ुदकुशी कर लेता है और ऐसा करने वाले तीन लोगों में से एक युवा होता है यानी देश में हर १२ मिनट में ३० वर्ष से कम आयु का एक युवा अपनी जान ले लेता है। ऐसा कहना है राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो का।

परिवार और नाते-रिश्तों का महत्व समझिए, ये मत भूलिए कि कोरोना जैसे महामारी में बड़े-बड़े महानगरों, बड़े-बड़े साहब को भी उनके छोटे से गाँव ने ही पनाह दी थी।

## पर्यावरण प्रदूषण / दोहन

### डॉ.इ. गौतम सागर

हम प्रकृति-पूजक के वंशज हैं,
क्यूँ हम अपनी प्रकृति को ही प्रदूषित किये जा रहे हैं,
वनों में रहने वाले हमारे पूर्वज हैं,
क्यूँ हम उनके घरोंदों तक को रौंदे जा रहे हैं,
नदियों में देवी-देवता बसते हैं,
क्यूँ हम उसमें भी अघुलनिये तत्व घोले जा रहे हैं,
अम्बर में हमारे भगवान बसते हैं,

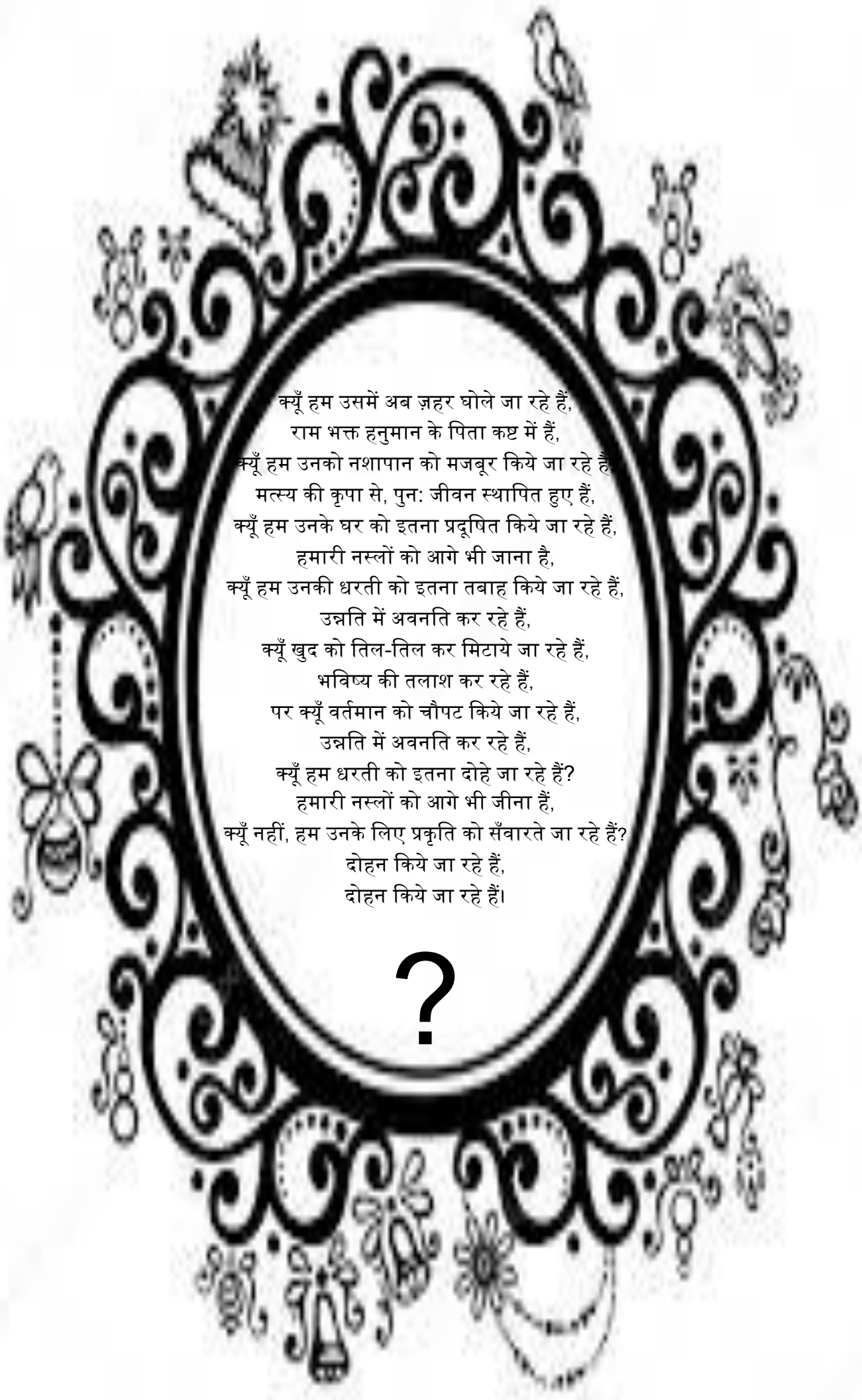
क्यूँ हम उसमें अब ज़हर घोले जा रहे हैं,
राम भक्त हनुमान के पिता कष्ट में हैं,
क्यूँ हम उनको नशापान को मजबूर किये जा रहे हैं,
मत्स्य की कृपा से, पुन: जीवन स्थापित हुए हैं,
क्यूँ हम उनके घर को इतना प्रदूषित किये जा रहे हैं,
हमारी नस्लों को आगे भी जाना है,
क्यूँ हम उनकी धरती को इतना तबाह किये जा रहे हैं,
उन्नति में अवनति कर रहे हैं,
क्यूँ खुद को तिल-तिल कर मिटाये जा रहे हैं,
भविष्य की तलाश कर रहे हैं,
पर क्यूँ वर्तमान को चौपट किये जा रहे हैं,
उन्नति में अवनति कर रहे हैं,
क्यूँ हम धरती को इतना दोहे जा रहे हैं?
हमारी नस्लों को आगे भी जीना हैं,
क्यूँ नहीं, हम उनके लिए प्रकृति को सँवारते जा रहे हैं?
दोहन किये जा रहे हैं,
दोहन किये जा रहे हैं।
?

# ओल्ड गोल्ड बोल्ड.....

**प्रो. बीना शर्मा**

क्यों हमेशा बुढ़ापे को कोसते रहते हो, यह भी तो आयु का एक पड़ाव ही है फिर भले अंतिम ही क्यों न हो। बार-बार आती है मुझको मधुर याद बचपन तेरी कहते कभी बचपने में खो जाते हो तो कभी किशोरावस्था को आँधी और तूफान का काल बताते हो। फिर इठलाता बलखाता यौवन आया जिसे आग अन्तर में लिए पागल ज़वानी कहा गया, ये बाल ऐसे ही सफेद नहीं हुए हैं और जीवन के अनुभवों का बाँट बखरा करते प्रौढ़ावस्था का आनंद। षष्ठी पूर्ति मनाते सीनियर सिटीजन की केटेगरी में आ गए और आठ दशक पार करते-करते वृद्धावस्था की ओर कदम बढ़ा दिए। जीवन के और पड़ावो का आनंद लिया और जैसे ही अंतिम चरण पर पहुँचे, अपने को बिल्कुल निष्क्रिय घोषित कर दिया। क्यों दोस्त जब सुख का समय तुम्हारा था तो इस बुढ़ापे को कहीं और थोड़े ही जाना था। कहते हैं न, बुढ़ापा कुछ नहीं, महज उम्र का एक आँकड़ा है।

अभिवादन "शीलस्य नित्य व्रद्धोपसेविन, चतवारि तस्य वरधनते आयु विद्या यशो बलम", याद करते वृद्धों की सेवा ही याद रह गई क्या कि अरे! हमने तो बहुत कर लिया, अब क्या करते ही रहेंगे। अब तो बस बाल-बच्चों से सेवा लेने का समय है। शिथिल होती इंद्रियाँ मन की दास हो गईं। "कछु मियाँ बाबरे कछु पी लई भंग" को चरितार्थ करने लगे। अब हमसे कुछ नहीं होता, बहुत कर लिया, क्या करते ही रहेंगे। अब हमारा आराम करने और सेवा कराने का समय है। और किस दिन के लिए बाल बच्चे पाल पोस कर बड़े किए थे, सेवा करना तो उनका धर्म है, बार-बार श्रवण कुमार का पाठ इसीलिए तो पढ़ाया था कि जैसे उसने अपने अंधे माता पिता को बंहगी/काँवर में बिठा कर तीर्थ यात्रा कराई, ऐसे ही हमारे बालक करें। अरे! जब ईश्वर ने तुम्हें अभी तक स्वस्थ बनाए रखा है, आँखें, हाथ, पैर, दुरुस्त हैं तो भले मानुष ये इच्छा पाल बैठना और उसे रोज- रोज रेखांकित करना जरुरी है क्या? जब तक अपने हाथ-पैरों को चलाते रहोगे, स्वस्थ बने रहोगे और जो मन ने ही ठान लिया कि हम तो बड़े बूढ़े हो गए हैं, अब हमसे कुछ नहीं होगा, बस अब तो यही चिन्ता लगी रहती है कि बुढ़ापा कैसे कटेगा। सच बताएँ तो ये मानसिकता और दुर्बल सोच ही आदमी को बूढ़ा बनाता है।

जीवेम शरद शतम का आशीर्वाद पाते तो खूब हरसाते हो और ईश्वर जब उतनी उम्र देता है तो फिर हाय-हाय चिल्लाते हो कि अब कैसे होएगी। हाथ, पैर चलते रहें, कम-से-कम अपने से सम्बंधित काम खुद करते रहें और सम्भव हो तो अगले के भी चार काम निबटा दें; हाथ, पैरों की सामर्थ्य चुक गई हो तो मुँह से बोल-बतिया कर, अपने अनुभवों के आधार पर सलाह मशविरा दे लें, बशर्ते कोई माँगे। कहीं खुद से देने बैठ गए तो याद रखिएगा वही हाल होगा जो सुंदर घोंसला बनाने वाली बया का हुआ था। "सीख दीजे बाय जाहे सीख सुहाए, सीख न दीजे बानरा बया का घर जाए।" तो जिन किस्से कहानियों को जीवन भर सुनते-सुनाते पढ़ते-पढ़ाते रहे, उन्हें याद करने का सही समय तो यही है। जीवन का सारा सत्व तो इसी काल में है, अनुभवों का निचोड़ यहीं है, परिपक्वता संतुलन यही है, गाम्भीर्य और कार्य कुशलता यही है। अब तक तो खेलते-खाते, भोग करते, इधर से उधर भटकते, मटरगस्ती करते, परिवार पालते, कमाई करते समय बीत गया। बचपन खेल में खोया, ज़वानी नींद में सोया, बुढ़ापा देख के रोया, इसीलिए तो कहा गया – क्यों रोये भाई बुढ़ापे को देखकर, पूरी जिंदगी फूली-फूली चरते रहे, मेरा-मेरा करते रहे, मैं और मेरा में उलझे रहे, बस जब सब तुम्हारा था तो बचा-खुचा भी तुम्हारा है। उसे शान से जिओ। जो भी जैसा भी है, अपना ही किया धरा है, दूसरों की सेवा में ही लगे रहे, कभी अपने शरीर की परवाह नहीं की, तो बैठ कर भुगतो अब। सबसे बडा सुख निरोगी काया पढ़ा तो था पर उसे व्यवहार में कब ला

पाए। अंट-संट खाते रहे, ऊलजलूल बकते रहे, न भोजन में व्यवस्थित रह पाए न भजन में, न व्यावहारिकता सीखी न स्वास्थ्य  के नियमों का पालन कर पाए। बस तब तो धा-पा के काम निबटाने की पड़ी रहती, भूखे-प्यासे या समय-बेसमय कुछ भी ठूँस लिया जाता। अब भुगतो। अरे! मशीनरी की देखभाल भी तो उतनी ही ज़रूरी थी जितने और काम। उसे समय-समय पर तेल पानी देना, धूप दिखाना था न, पर या तो धका-पेल लगे रहे या बिलकुल आराम फरमाते रहे, शरीर को जंग लग गई, हाथ-पैरों के जोड़ जाम हो गए तो हाय-हाय चिल्लाते हो। इंद्रियों के शिथिल होते ये सब तो होगा ही, उसे स्वीकार-पूर्वक ग्रहण कर लो तो ज़्यादा अच्छा है।

और जो वृद्धाश्रमों की बढ़ती संख्या से चिंतित हो तो उसे भी भूल जाओ, ज़वानी भर कमाया, कुछ तो बुढ़ापे के लिए भी जोड़ा होगा, तो उससे अपना संतोष पूर्वक जीवन बिताओ, जैसी टूटी-फूटी झोंपड़ी है, जैसा रूखा-सूखा अपने पास है, उसमें मस्त रहो। अब खाने-पीने और स्वास्थ्य पर पैनी निगाह रखो। बालकों को तो खूब समर्थ बना दिया, अब उनकी चिन्ता में मत घुलो, वे तुम्हारी चिन्ता करने लायक हुए। सबके भले के लिए ईश्वर से प्रार्थना करो, लोकमंगल की कामना करो पर न किसी के व्यक्तिगत जीवन में दखलंदाजी करो और न अपने में करने दो। मन करे साथ रहो, ज्यादा चकल्ल्स हो तो अपने-अपने में सिमट जाओ। न किसी पर बोझा बनो न किसी को अपने ऊपर लदने दो। बुढ़ापे को रोते-झींकते ही नहीं काटा जाता, उसे सुखद भी बनाया सकता है। बस दूसरों से अपेक्षाएँ कम करनी होती हैं, जहाँ तक सम्भव हो अपना काम स्वयं करने की आदत डाल लेनी चाहिए। ये परनिर्भरता बहुत परेशान करती है स्वयं को भी और दूसरों को भी। अपने अकेले के बल पर इतनी दूरी तक नाव खींच लाए, अब तो बिलकुल मंजिल के नजदीक हैं सो धैर्य बनाए रखो, ये भी पार लग ही जाएगी। बस हाय-तौबा मत मचाओ कि कैसे होगा, सब होगा अच्छे से होगा।

देखो जिसे झींकाने की आदत है वह तीस चालीस की उम्र में ही अपने को बीता मान लेता है, शरीर से कम, मन से दुर्बल अधिक होता है। जो समय दिन-रात काम कर भविष्य बनाने का है उसे यूँ ही ये कह कर बरबाद कर देता है कि बस अब मेरा समय आ गया, अरे तुम कब से चित्रगुप्त बन गए जो अपनी मृत्यु की तिथि की भविष्यवाणी करने लग पड़े, यह काम तो यमराजा को सौंपा गया है। ये तुम्हारे चाहने न चाहने से नहीं होगा, जब समय पूरा हो जाएगा तो न चाह कर भी जाना पड़ेगा। इसे हम मानुष तय नहीं करते। ये हमारा काम है भी नहीं। हमारा काम तो बस इतना है कि जितना जीवन मिला है, जितनी साँसें मिली हैं, उन्हें ठीक तरह से जी लें। रोज-रोज कहने से कोई मरा तो नहीं करता, हाँ, वातावरण को बोझिल नकारात्मक और अपने मन को कमजोर जरूर कर लेता है। तो इस तरह के प्रलाप जीवन के किसी भी पड़ाव पर उचित नहीं, जीवन जैसा भी है उसे सुखपूर्वक जीना मन को प्रफुल्लित रखता है। सो “ओल्ड इज गोल्ड” के साथ “ओल्ड इज बोल्ड” को भी जीवन में समाहित कर लीजिए, जिंदगी चैन से बीतेगी।

## इलाज़

**बी. एल. गौड़**

वह न जाने
कितने चारागरों से मिला

पर सब व्यर्थ
उसे अपनी बीमारी का
कोई इलाज नहीं मिला।
किसी ने सलाह दी-
विशेषज्ञ से मिलो
वह मिला
विशेषज्ञ ने बहुत देर तक
उसकी बात
बड़े ध्यान से सुनी
वार्तालाप में
एक पल ऐसा भी आया
जब वह
कहते कहते थक गया
और विशेषज्ञ भी
सुनते सुनते सो गया।
अचानक
विशेषज्ञ झटके से उठा और बोला -
तुम सही जगह आए
तुम्हारे रोग की जड़ भी
मैंने पकड़ ली
लेकिन मेरे भाई
दुनिया में
मनोरोग का इलाज तो होता है
लेकिन
मन के रोग का कोई इलाज नहीं होता।

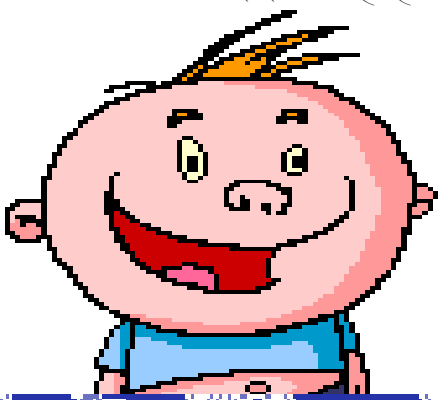

# अनार्यों की देन

## रवींद्रनाथ ठाकुर

किसी को यह नहीं समझना चाहिए कि अनार्यों ने हमें कुछ नहीं दिया। वास्तव में प्राचीन द्रविड़ लोग सभ्यता की दृष्टि से हीन नहीं थे। उनके सहयोग से हिंदू सभ्यता को रूप-वैचित्र्य और रस-गाम्भीर्य मिला। द्रविड़ तत्व-ज्ञानी नहीं थे। पर उनके पास कल्पना शक्ति थी, वे संगीत और वास्तुकला में कुशल थे। सभी कलाविद्याओं में वे निपुण थे। उनके गणेश-देवता की वधू कला-वधू थी। आर्यों के विशुद्ध तत्वज्ञान के साथ द्रविड़ों की रस-प्रवणता और रूपोद्भाविनी शक्ति के मिलन से एक विचित्र सामग्री का निर्माण हुआ। यह सामग्री न पूरी तरह आर्य थी, न पूरी तरह अनार्य - यह हिंदू थी। दो विरोधी प्रवृत्तियों के निरंतर समन्वय-प्रयास से भारतवर्ष को एक आश्चर्यजनक सम्पदा मिली है। उसने अनंत को अंत के बीच उपलब्ध करना सीखा है, और भूमा को प्रात्यहिक जीवन की तुच्छता के बीच प्रत्यक्ष करने का अधिकार प्राप्त किया है। इसलिए भारत में जहाँ भी ये दो विरोधी शक्तियाँ नहीं मिल सकीं वहाँ मूढ़ता और अंधसंस्कार की सीमा न रही; लेकिन जहाँ भी उनका मिलन हुआ वहाँ अनंत के रसमय रूप की अबाधित अभिव्यक्ति हुई। भारत को ऐसी चीज मिली है जिसका ठीक से व्यवहार करना सबके वश का नहीं है, और जिसका दुर्व्यवहार करने से देश का जीवन गूढ़ता के भार से धूल में मिल जाता है। आर्य और द्रविड़, ये दो विरोधी चित्तवृत्तियाँ जहाँ सम्मिलित हो सकी हैं वहाँ सौंदर्य जगा है; जहाँ ऐसा मिलन सम्भव नहीं हुआ, वहाँ हम कृपणता और छोटापन देखते हैं। यह बात भी स्मरण रखनी होगी कि बर्बर अनार्यों की सामग्री ने भी एक दिन द्वार को खुला देखकर नि:संकोच आर्य-समाज में प्रवेश किया था। इस अनधिकृत प्रवेश का वेदनाबोध हमारे समाज ने दीर्घ काल तक अनुभव किया।

युद्ध बाहर का नहीं, शरीर के भीतर का था। अस्त्र ने शरीर के भीतर प्रवेश कर लिया; शत्रु घर के अंदर पहुँच गया। आर्य-सभ्यता के लिए ब्राह्मण अब सब-कुछ हो गए। जिस तरह वेद अभ्रांत धर्म-शास्त्र के रूप में समाज-स्थिति का सेतु बन गया, उसी तरह ब्राह्मण भी समाज में सर्वोच्च पूज्य पद ग्रहण करने की चेष्टा करने लगे। तत्कालीन पुराणों, इतिहासों और काव्यों में सर्वत्र यह चेष्टा प्रबल रूप से बार-बार व्यक्त हुई है जिससे हम समझ सकते हैं कि यह प्रतिकूलता के विरुद्ध प्रयास था, धारा के विपरीत दिशा में यात्रा थी। यदि हम ब्राह्मणों के इस प्रयास को किसी विशेष सम्प्रदाय का स्वार्थ-साधन और क्षमता-लाभ का प्रयत्न मानें, तो हम इतिहास को संकीर्ण और मिथ्या रूप में देखेंगे। यह प्रयास उस समय की संकट-ग्रस्त आर्य-जाति का आंतरिक प्रयास था। आत्मरक्षा का उत्कट प्रयत्न था। उस समय समाज के सभी लोगों के मन में ब्राह्मणों का प्रभाव यदि अक्षुण्ण न होता तो चारों दिशाओं में टूट कर गिरने वाले मूल्यों को जोड़ने का कोई उपाय न रह जाता।

इस अवस्था में ब्राह्मणों के सामने दो काम थे - एक, पहले से चली आ रही धारा की रक्षा करना, और दूसरा, नूतन को उसके साथ मिलाना। जीवन-क्रम में ये दोनों काम अत्यंत बाधाग्रस्त हो उठे थे, इसलिए ब्राह्मणों की क्षमता और अधिकार को समाज ने इतना अधिक बढ़ाया। अनार्य देवता को वेद के प्राचीन मंच पर स्थान दिया गया। रुद्र की उपाधि ग्रहण करके शिव ने आर्य-देवताओं के समूह में पदार्पण किया। इस तरह भारतवर्ष में सामाजिक मिलन ने ब्रह्मा-विष्णु-महेश का रूप ग्रहण किया। ब्रह्मा में आर्य-समाज का आरम्भ काल था, विष्णु में मध्याह्नकाल, और शिव में उसकी शेष परिणति।

यद्यपि शिव ने रुद्र के नाम से आर्य-समाज में प्रवेश किया, फिर भी उसमें आर्य और अनार्य दोनों मूर्तियाँ स्वतंत्र हैं। आर्य के पक्ष से वह योगीश्वरी है - मदन को भस्म करके निर्वाण के आनंद में मग्न। उसका दिग्वास संन्यासी के त्याग का लक्षण है। अनार्य के पक्ष से वह वीभत्स है - रक्तरंजित गजचर्मधारी, भाँग और धतूरे से उन्मत्त। आर्य के

पक्ष से वह बुद्ध का प्रतिरूप है और वह सर्वत्र बौद्ध मंदिरों पर सहज ही अधिकार करता है। दूसरी ओर, वह भूत-प्रेत इत्यादि श्मशानचर विभीषिकाओं को, और सर्प-पूजा, वृषभ-पूजा, लिंग-पूजा और वृक्ष-पूजा को आत्मसात करते हुए समाज के अंतर्गत अनार्यों की सारी तामसिक उपासना को आश्रय देता है। एक ओर, प्रवृत्ति को शांत कर के निर्जन स्थान में ध्यान और जप द्वारा उसकी साधना की जाती है; दूसरी ओर, चड़क पूजा इत्यादि विधियों से अपने-आपको प्रमत्त करके, और शरीर को तरह-तरह के क्लेश में उत्तेजित करके उसकी आराधना होती है। इस तरह आर्य-अनार्य की धाराएँ गंगा-जमुना की तरह एक हुईं; लेकिन उसके दो रंग एक-दूसरे के समीप हो कर पृथक रहे।

# आजादी का अमृत महोत्सव यूँ मनाएँ

**डॉ. एम.एल. गुप्ता 'आदित्य'**
**(निदेशक, वैश्विक हिंदी सम्मेलन)**

आजादी का अमृत महोत्सव यूँ मनाएँ,
भारत है युगों-युगों से अपने देश का नाम
'भारत' को 'इंडिया' से आज़ादी दिलवाएँ,
उन्नत देश स्वभाषा में पढ़ते व करते काम
निज भाषाओं को अँग्रेजी से मुक्त कराएँ।
गुलामी भौतिक ही नहीं मानसिक होती,
गुलामी की मानसिकता से आजादी पाएँ
राष्ट्र केवल भूमि का टुकड़ा नहीं होता,
राष्ट्र, ज्ञान-विज्ञान, धर्म संस्कृति से होता
सब मिल, अपना धर्म-संस्कृति बचाएँ।
ज्ञान, धर्म-संस्कृति की वाहक है स्वभाषा,
आओ गर्व से हम अपनी भाषाएँ अपनाएँ
हर मन में, धधके राष्ट्र प्रेम की ज्वाला।
भाषा-संस्कृति से जगें देश-प्रेम भावनाएँ,
ऐसे, आजादी का अमृत महोत्सव मनाएँ॥

# खजुराहो यात्रा : एक अविस्मरणीय दैवीय अनुभव

**डॉ. विदुषी शर्मा**
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
(विशेषज्ञ, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, उच्चतर शिक्षा विभाग, भारत सरकार)

यात्रा.....

जिसका नाम आते ही मन में अजीब-सी तरंगे उठने लगती हैं। एक उत्साह, एक जोश उत्पन्न हो जाता है कि लगातार एक ही तरह के दैनिक जीवन से नया, कुछ हटकर देखने को, घूमने को, सीखने को मिलेगा। जहाँ हम स्वच्छंद होंगे, पारिवारिक जिम्मेदारियों का बोझ शायद कुछ कम होगा। जहाँ अपनी भावनाओं को, अपने सपनों को, अपनी इच्छाओं को जीने का एक अवसर मिलेगा। इसी के साथ-साथ अपने अनुभवों को, अपनी यादों को, अपने आनंद को हम कैमरे के माध्यम से एक अनंत ख़ज़ाने के रूप में अपने साथ लेकर आएँगे । यही है एक यात्रा की सुखद अनुभूति। इन यात्राओं के स्मृति चित्रों को दोबारा जब भी हम देखते हैं तो जैसे एक फिल्म की भाँति पूरी यात्रा हमारी आँखों के सामने से गुजर जाती है और हमें एक नई ताज़गी, जीने की प्रेरणा फिर से दे जाती है और यदि यह यात्रा किसी धार्मिक स्थल, तीर्थ स्थल और ऐतिहासिक होने के साथ-साथ प्रकृति से भी जुड़ी हो तो क्या बात है।

हम हमेशा से ही सपने देखते हैं। पर यह सपने ऐसे होते हैं जिन्हें किसी के साथ शायद ही साझा कर पाएँ। कोई भी चित्र देखकर, कोई फिल्म देखकर, कोई दृश्य देखकर या किसी की बातें सुनकर, वृत्तांत सुनकर हमारे मन में भी कहीं ना कहीं एक इच्छा, एक हूक सी उठती है कि हमें भी उस विशेष स्थान को देखना है, उसकी यात्रा करनी है, और जीवन में कभी न कभी तो ऐसा मौका जरूर मिलेगा। हम सभी के जीवन में यह पल जरूर आते हैं जब हमारी दबी हुई इच्छाएँ साकार रूप ले लेती है। जब हमें उनको पूरा करने का कोई कारण कोई, हेतु प्राप्त होता है।

कोई भी यात्रा अपने आप में अनोखी ही होती है और इसके साथ यह भी कि उसके चित्र भी पास में हों तो वह अविस्मरणीय बन जाती है। यदि इस यात्रा के अनुभव चित्र सहित हम दूसरों के साथ साझा करते हैं तो वह संस्मरण बन जाती है। वैसे तो जीवन भी एक लम्बी यात्रा ही है जिसमें विभिन्न प्रकार के पड़ाव आते हैं सुख-दु:ख, हानि-लाभ, मिलन-जुदाई, जीवन की यात्रा के कुछ अविस्मरणीय, अवश्यम्भावी पड़ाव होते हैं जो सभी के जीवन में एक अलग अनुभव और सीख ले कर आते हैं। जब इन्हीं अनुभवों को यदि शब्द प्रदान कर दिए जाते हैं तो वह 'रचना' बन जाती और शब्द ब्रह्म है इसलिए वह अमर हो जाती है।

बचपन से लेकर मैं कभी भी खजुराहो के बारे में, उसके मंदिरों इत्यादि के बारे में कोई भी कार्यक्रम, मैगजीन इत्यादि में देखती थी तो मन में इच्छा जरूर होती थी कि जीवन में एक बार तो यहाँ की यात्रा करनी है। न जाने कब ये इच्छा पूरी होगी।

मुझे १ फरवरी २०२० को खजुराहो में ESW ( Environment and Social welfare Society) सोसाइटी की तरफ से २ दिवसीय अंतराष्ट्रीय संगोष्ठी में जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

मेरी खजुराहो की यात्रा के पीछे एक महत्वपूर्ण कारण था। अत: मेरा मन अति प्रसन्न हुआ और मैंने जल्द से जल्द ट्रेन की टिकट रिज़र्व करवा ली कि मुझे समय पर खजुराहो पहुँचना है। निश्चित समय पर मैं खजुराहो

पहुँच गई। मन में बहुत उत्साह था कि आज बचपन का सपना सच होने जा रहा था। सबसे पहले संगोष्ठी में उपस्थित रहना भी आवश्यक था। नियत समय पर संगोष्ठी प्रारम्भ हो गई।

वहाँ पर मेरे द्वारा डॉ देवी शंकर सुमन जी, साइंटिस्ट मिनिस्ट्री ऑफ एनवायरमेंट फॉरेस्ट एंड क्लाइमेट चेंज गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, डॉ. उलरिच वर्क, प्रेसिडेंट जर्मन एसोसिएशन ऑफ होम थेरेपी का विधिवत स्वागत किया गया। ।

बहुत ही सुंदर संगोष्ठी और पर्यावरण पर आधारित विषयों के साथ सभी ने अपने रिसर्च पेपर (पावर पॉइंट प्रेजेंटेशन ) प्रस्तुत किए जिनसे बहुत कुछ सीखने, जानने का मौका मिला । डॉ उलरिच जो कि जर्मनी से थे उन्होंने हवन थेरेपी पर बहुत सुंदर प्रेजेंटेशन प्रस्तुत की । उन्होंने बताया कि किस प्रकार से हवन हमारे पर्यावरण के लिए, हमारे अस्तित्व के लिए, हमारे स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है। यह विडम्बना ही कहेंगे कि हम अपनी सभ्यता, संस्कृति को भूलते जा रहे हैं जो कि हम पश्चिमीकरण की तरफ बढ़ते जा रहे हैं, कुछ समय की माँग है और कुछ मजबूरी कही जा सकती है। जबकि प्राचीन काल से हमारे ऋषि-मुनियों द्वारा कोई भी शुभ कार्य हवन, यज्ञ इत्यादि से प्रारम्भ किया जाता था जिससे न केवल वातावरण शुद्ध होता था बल्कि हर तरफ एक आध्यात्मिक, सात्विक ऊर्जा का संचार होता था जो हमारे मन मस्तिष्क तथा विचारों को भी सात्विकता प्रदान करती थी । परंतु आज जहाँ हर तरफ प्रदूषण का ही बोलबाला है तो इस तरह का कार्य बहुत सही दिशा में काम करेगा। कुल मिलाकर संगोष्ठी का अनुभव बहुत ही अच्छा रहा, स्मरणीय रहा। ये तो संगोष्ठी से सम्बंधित कुछ अनुभव थे।

फिर मैंने अपना शोधपत्र वाचन किया। इसके पश्चात मैं निकल गई अपनी खजुराहो की यात्रा पर। इसके लिए मैंने एक टैक्सी किराए पर ली ताकि कम समय में मैं अपनी यात्रा पूरी कर सकूँ।

खजुराहो के मंदिर अपने आप में ही अपनी मिसाल हैं। खजुराहो के मंदिरों को चंदेल वंश के राजाओं ने बनवाया था। यहाँ ८५ मंदिर थे, जिनमें से सिर्फ़ २० ही बचे हैं। खजुराहो के मंदिरों की बाहरी दीवारों की कामुक मूर्तियाँ विश्व-प्रसिद्ध हैं और यूनेस्को की वर्ल्ड हेरिटेज साइट्स की लिस्ट में शामिल हैं।

सभी मंदिरों के बारे में एक साथ बताने की बजाय मैं एक-एक मंदिर की विशेषता और उसके बारे में कुछ स्मृतियाँ आपके साथ बाँटना चाहती हूँ।

खजुराहो के मंदिर अपने आप में अद्वितीय हैं। यहाँ हर पत्थर पर जीवन दिखाई देता है। प्रत्येक मंदिर अपने-आप में भव्यता का सबसे बड़ा नमूना कहा जा सकता है। यहाँ की स्थापत्य कला, शिल्प-कला देखते ही बनती है । प्रत्येक मंदिर के द्वार पर अर्ध चंद्र या सूर्य के चित्र बने हुए हैं जिसके दोनों ओर शंख दिखाई देते हैं। सभी मंदिर अपने आप में भव्यता लिए हुए हैं जिनका अलग अलग महत्व है। यहाँ पर सभी मंदिर सूर्योदय पर खुलते हैं और सूर्यास्त पर बंद हो जाते हैं। यही सिस्टम रखा हुआ है यहाँ पर जिसका पालन बहुत ही सख्ती से किया जाता है । एक मंदिर में रात को लाइट एंड साउंड शो होता है जिसकी टिकट ढाई सौ रुपए रखी गई है। यह लगभग सवा-घंटे का शो होता है जिसमें मंदिरों के बारे में बहुत विस्तार से बताया जाता है साथ में उनके इतिहास तथा इन मंदिरों के निर्माण के पीछे जो कथाएँ किवदंतियाँ हैं उनके बारे में विस्तार से सूचना दी जाती है। खजुराहो के मंदिर चंदेल वंश के द्वारा बनाए गए हैं। इन सभी मंदिरों में जीवन के सभी पड़ावों पर प्रकाश डाला गया है। मंदिर में जाने से पहले वहाँ पर अप्सराओं की मूर्तियाँ हैं जो नारी सौंदर्य को उजागर करती हैं। यह इस बात का प्रतीक है कि हमें जीवन में इस तरह के अवसर मिलते रहेंगे जब विषय वासनाएँ हमें अपनी ओर आकृष्ट करती हैं । हमें फिर भी स्वयं पर संयम रखते हुए अपना कर्म करते रहना है। यह अप्सराएँ विभिन्न मुद्राओं में दिखाई देती हैं जिनमें दैनिक जीवन से सम्बंधित कार्यकलाप भी सम्मिलित हैं। इसके बाद गृहस्थ धर्म, प्रेम, समर्पण भाव भी दिखाया गया है। अभी तक हम लोग यह सोचते थे कि खजुराहो के मंदिर केवल स्त्री-पुरुष के मिलन, कामशास्त्र की गाथा का वर्णन करते हैं। वहाँ पर अंतरंग चित्र अधिक दिखाई देते हैं। प्रेम सम्बंधों को बहुत सूक्ष्मता से दिखाया गया है। परंतु इनके पीछे जो इतिहास है और जो भावनाएँ हैं वह अलग है। यहाँ पर प्रेम-

प्रदर्शन के साथ इन मूर्तियों के चेहरों के भावों पर कहीं भी वासना या उत्तेजना नहीं दिखाई देती है। उनके चेहरों पर एक दिव्यता, एक समर्पण, एक संतुष्टि, एक तेज दिखाई देता है जो गृहस्थ धर्म के स्तम्भ माने गए हैं। यही प्रेम सम्बंध, समर्पण सृष्टि चक्र का आधार है। यहीं से एक औरत माँ बनने का सौभाग्य प्राप्त करती है और माँ बनना पूर्णता को प्राप्त करना है। प्रसव पीड़ा का आनंद और उसके बाद का फल क्या होता है इसके बारे में शब्दों में बता पाना सम्भव नहीं है। ईश्वर की प्राप्ति का हेतु हमारा शरीर और मन ही है। हम अपने शरीर, अपने मन के द्वारा संतुष्टि को प्राप्त करने के बाद ईश्वर की ओर अधिक दृढ़तापूर्वक कदम बढ़ाते हैं। तृप्ति भी हमारे जीवन का एक अभिन्न अंग है। शरीर और आत्मा तृप्त होने के बाद हम एक-दूसरे पायदान पर चलते हैं जहाँ पर हमें दिव्यता, भव्यता और स्वर्गिक आनंद की प्राप्ति हो सकती है क्योंकि इन सब के लिए हमारे चरित्र में बहुत सी चीजों की आवश्यकता है। कुल मिलाकर आज मेरा भ्रम भी दूर हो गया कि खजुराहो के मंदिर केवल प्रेम, सम्बंधों पर ही आधारित नहीं है। यहाँ पर बहुत कुछ देखने, बहुत कुछ सीखने को मिलता है। जैन धर्म के मंदिर में जहाँ बहुत से पुराने चित्र दिखाई दिए जिनमें शोध की बहुत सी सम्भावनाएँ नजर आईं ।

खुजराहो के दूल्हा देव मंदिर के कुछ चित्र। यहाँ पर एक शिवलिंग है जिसमें १०८ छोटे-छोटे शिवलिंग बने हुए हैं। यह शिवलिंग केवल शिवरात्रि पर ही पूजा के लिए उपलब्ध हो पाता है यानि इसके कपाट केवल शिवरात्रि पर ही खुलते हैं। कहा जाता है कि यहाँ पर सुहागिनें अपने पति की लम्बी आयु के लिए वर माँगती हैं। इस मंदिर का नाम दुल्हादेव मंदिर इसलिए पड़ा है कि एक बार एक बारात जा रही थी तो दूल्हे की तबीयत अचानक से खराब हो गई और वह परलोक सिधार गया तो इसी मंदिर में उसकी पत्नी ने आकर पूजा की तो उसे पुनः जीवनदान मिल गया। इसलिए इस मंदिर का नाम दुल्हादेव मंदिर है। बहुत ही शांत तथा स्वच्छ निर्मल वातावरण। अविस्मरणीय अनुभव

प्रस्तुत चित्र मंतेश्वर महादेव मंदिर का है। यहाँ पर प्रात:काल सभी भक्तजन पूजा करने आते हैं जैसा कि मैंने पहले भी कहा है कि खजुराहो में मंदिर सूर्योदय के समय खुलते हैं और सूर्यास्त पर बंद हो जाते हैं। प्रस्तुत मंदिर में लगभग १८ फुट लम्बा शिवलिंग एक बहुत बड़े चबूतरे पर स्थित है। मैंने अभी तक कि अपनी जिंदगी में इतना बड़ा शिवलिंग नहीं देखा है। अद्भुत, अद्वितीय और आकर्षक भगवान शिव का प्रतीक शिवलिंग अनंतता, विशालता लिए हुए हैं जिसे देख कर आत्मिक शांति और एक सात्विक ऊर्जा का संचार हुआ। वहाँ पर पंडित जी ने बताया कि यह शिवलिंग १८ फुट का है जिसमें ९ फुट ऊपर और ९फुट नीचे है । शिवलिंग के नीचे एक बहुमूल्य मणि चंदेल वंश के राजाओं के द्वारा दबाई गई है कि वह मणि सुरक्षित रह सके। शायद उस मणि का यह प्रभाव है कि अभी तक यह शिवलिंग कहीं से खंडित नहीं नजर आता। बहुत ही सुंदर नजारा ।मैं अपने-आप को भाग्यशाली समझती हूँ कि मैं यहाँ पहुँचकर इस शिवलिंग के दर्शन कर पाई।

खजुराहो के जैन मंदिर के कुछ चित्र जहाँ पर शाकाहार परोपकार, पर्यावरण संरक्षण इत्यादि के बारे में अति सुंदर संदेश दिए हुए हैं। इसी के साथ यहाँ पर पौराणिक भारतीय सभ्यता के बारे में बहुत सुंदर वर्णित चित्र भी प्रस्तुत थे जिन्हें मैं सहेज कर अपने साथ ले आई तथा आप सबके साथ साझा करना चाहती हूँ। कृपया आप भी देखिए कितना विशाल है हमारा भारत देश और उसका धर्म, उसकी संस्कृति, उसकी विरासत। गर्व है हमें हमारे भारतीय होने पर। जय माँ भारती।

खजुराहो के मंदिरों की श्रृंखला में आज हम बात करते हैं 'कंदरिया महादेव' मंदिर की। सभी मंदिरों की तरह यह मंदिर भी बहुत भव्य तथा मनमोहक है। यहाँ की शांति और सौम्यता तो देखते ही बनती है।

कंदरिया महादेव मंदिर पश्चिमी समूह के मंदिरों में विशालतम है। यह अपनी भव्यता और संगीतमयता के कारण प्रसिद्ध है। इस विशाल मंदिर का निर्माण महान् चन्देल राजा विद्याधर ने महमूद गजनवी पर अपनी विजय के उपलक्ष्य में किया था। लगभग १०५० ईसवीं में इस मंदिर को बनवाया गया। यह एक शैव मंदिर है। तांत्रिक समुदाय को प्रसन्न करने के लिए इसका निर्माण किया गया था। कंदरिया महादेव मंदिर लगभग १०७

फुट ऊँचा है। मकर तोरण इसकी मुख्य विशेषता है। मंदिर के संगमरमरी लिंगम में अत्यधिक ऊर्जावान मिथुन हैं। अलेक्जेंडर कनिंघम के अनुसार यहाँ सर्वाधिक मिथुनों की आकृतियाँ हैं। उन्होंने मंदिर के बाहर ६४६ आकृतियाँ और भीतर २४६ आकृतियों की गणना की थी।

अंदर मंडप में जाने के लिए प्रवेश द्वार पर अर्धचंद्र तथा शंख के चित्र बनाए गए हैं । उसके बाद अंदर रोशनी का प्रबंध इस प्रकार से किया गया है कि आर-पार आने वाली रोशनी का केंद्र सामने पड़ी मूर्ति पर बिल्कुल स्पष्ट रूप से दिखाई दे। यह जो चित्र दिखाई दे रहे हैं यहाँ पर कोई भी कृत्रिम रोशनी का प्रबंध नहीं है क्योंकि जैसा कि मैंने पहले भी कहा है कि यहाँ मंदिर सूर्य उदय पर खुलते हैं और सूर्यास्त पर बंद हो जाते हैं तो अधिकतर कृत्रिम रोशनी की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। परंतु मंदिरों के अंदर भी वास्तु कुछ इस प्रकार से है कि रोशनी को मुख्य मंदिर की मूर्ति तक केंद्रित किया गया है ताकि भगवान के दर्शन बहुत स्पष्ट और सुंदर तरीके से हो सके। यह जो चित्र लिए गए हैं, मोबाइल के कैमरे से लिए गए हैं और देखिए कितने स्पष्ट, सुंदर हैं। इसी के साथ मंदिर के मंडप में जाने से पहले दाएँ तरफ एक लिपि अंकित की गई है जिसमें प्रथम "ओम नमः शिवाय" बिल्कुल स्पष्ट दिखाई दे रहा है उसके बाद शायद हम पढ़ पाने में सम्भव नहीं हो पाए। परंतु इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उस समय भी यह सब कुछ इतना उन्नत था और लिपियाँ आसानी से पढ़ी और समझी जा रही थीं तभी तो वह पत्थरों पर उकेरी गई । यहाँ की शिल्प कला बहुत ही अद्वितीय है। पत्थरों पर अंकित मूर्तियाँ अपने-आप में इतनी सौम्य और सुंदर हैं कि उनको शब्दों में अभिव्यक्त कर पाना शायद मेरे बस में नहीं है ।

खजुराहो के मंदिर की श्रृंखला में दूसरा मंदिर है विश्वनाथ मंदिर। इसमें भगवान विश्वनाथ यानी शिवलिंग रूप में विराजमान है। प्रत्येक मंडप में यहाँ बहुत सुंदर चित्रकारी और शिल्प कला, नक्काशी देखने को मिलती है । नंदी मंडप में जब मैंने देखा तो नंदी जी की इतनी विशाल प्रतिमा कि मन गद्गद हो गया। बहुत सुंदर शांत वातावरण ऐसा लगता है जैसे ईश्वर का साक्षात्कार हो गया हो। यहाँ के मंदिरों की विशेषता यह है कि एक ही पत्थर के बनाए गए हैं और पता नहीं उन में कौन सी धातु मिलाई गई है कि अभी तक इतने मजबूत और चिकने हैं कि सभी लोग, पर्यटक दाँतो तले ऊँगली दबा लेते हैं। यहाँ की भव्यता सुंदरता देखते ही बनती है। मंदिर के कक्ष में जहाँ विश्वनाथ जी, की शिवलिंग की स्थापना है वहाँ पर रोशनी का इस तरह से प्रबंध किया गया है कि क्रॉस वेंटीलेशन के तहत बिना किसी रोशनी के अंदर आते ही शिवलिंग के दर्शन बहुत ही सुंदर प्रकार से हो जाते हैं क्योंकि दोनों तरफ की रोशनी शिवलिंग पर दिखाई देती है । हर प्रकार के मंदिर के दरवाजे के बाहर अर्धचंद्र या सूर्य का बिंब पूर्ण गोला बनाया गया है। उसके दोनों तरफ शंख हैं। विश्वनाथ मंदिर के मंडप के बाहर एक लिपि का चित्र भी दिखाई दिया जहाँ पर ओम नमः शिवाय बिल्कुल साफ दिखाई दे रहा है। यानी तब तक हम यह लिपियाँ और भाषा बिल्कुल सही से पढ़ना और लिखना सीख गए थे - अनुसंधान का विषय है ।

## देवी जगदम्बा मंदिर

कंदरिया महादेव मंदिर के चबूतरे के उत्तर में जगदम्बा देवी का मंदिर है। जगदम्बा देवी का मंदिर पहले भगवान विष्णु को समर्पित था और इसका निर्माण १००० से १०२५ ईसवीं के बीच किया गया था। सैकड़ों वर्षों पश्चात् यहाँ छतरपुर के महाराजा ने देवी पार्वती की प्रतिमा स्थापित करवाई थी इसी कारण इसे देवी जगदम्बा मंदिर कहते हैं। यहाँ पर उत्कीर्ण मैथुन मूर्तियों में भावों की गहरी संवेदनशीलता शिल्प की विशेषता है। यह मंदिर शार्दूलों के काल्पनिक चित्रण के लिए प्रसिद्ध है। शार्दूल वह पौराणिक पशु था जिसका शरीर शेर का और सिर तोते, हाथी या वराह का होता था।

कुल मिलाकर इस मंदिर की यात्रा भी अविस्मरणीय रही। खजुराहो में जो बात सबसे अच्छी लगी वह यह कि यहाँ पर किसी भी प्रकार के किसी पुजारी के दर्शन बहुत कम हुए और कहीं भी किसी ने दान-दक्षिणा के लिए मजबूर नहीं किया जैसा कि ज्यादातर हिंदू तीर्थों पर आजकल होता है कि आप को दान-दक्षिणा के लिए मजबूर किया जाता है। यदि हम ऐसा नहीं करते तो तरह-तरह की बातें बनाई जाती हैं और हमारी श्रद्धा और आस्था पर प्रश्न चिन्ह लगाया जाता है। मैं यह पूछना चाहती हूँ कि यदि जो लोग पैसा नहीं दे सकते या नहीं देते

हैं क्या उनमें श्रद्धा नहीं है, ईश्वर में आस्था नहीं है? वे लोग इतनी दूर यदि इतना सब कुछ खर्च करके, अपने पीछे से हर तरह से व्यवस्था करके आए हैं तो क्या बिना आस्था, बिना श्रद्धा के आए हैं? और यदि हम ५०-१००₹ चढ़ा दें तो क्या वह श्रद्धा जाग जाएगी ? इस तरह के कार्यकलापों से मन दु:खी हो जाता है । पर यहाँ ऐसा कुछ नहीं था जिसे देख कर मन को सुकून मिला।

बस इसके बाद वापसी का समय हो गया और वैसे भी खजुराहो के सभी मंदिरों के दर्शन ईश्वर की असीम कृपा से मैंने कर ही लिए थे। यह एक ऐसा वृत्तांत है जो मन में बहुत शांति, श्रद्धा और एक नई चेतना लेकर आया था। ईश्वर का बहुत-बहुत धन्यवाद इतने पवित्र स्थल के दर्शन मैं कर पाई। बहुत ही अविस्मरणीय यात्रा। इसी के साथ-साथ मन में बहुत कुछ और भी जागृत हो गया है कि काश कभी मदुरै, तमिलनाडु, तिरुचिरापल्ली के भी मंदिर एक बार देखने का सौभाग्य प्राप्त हो? देखते हैं यह इच्छा कब पूरी हो पाती है, सब कुछ प्रभु के हाथ है। जब प्रभु इच्छा.....

जितना मिला है उसमें भी संतोष करना चाहिए। बस इससे अधिक और क्या लिखना है -

इति शुभमस्तु।

# रोटेशन-सिस्टम

**रामनगीना मौर्य**

देर रात गये नींद खुली। तीव्र लघुशंका की हाजत महसूस हुई। लघुशंका से निबटने के बाद लॉबी से होते हुए बेड-रूम की ओर बढ़ा ही था कि कुछ खुसर-फुसर-सी आवाजें मेरे कानों में पड़ी। तन में सुरसुरी, तो मन में कुछ आशंका सी हुई। सामने लॉबी की दीवाल पर टँगी घड़ी की तरफ निगाह चली गयी। दो बजकर तेइस मिनट हो रहे थे। इतनी रात गये, ये आवाजें कहाँ से आ रही हैं...? ऐसा लगा...मानो आवाजें अगल-बगल से ही आ रही हैं। गौर किया तो महसूस हुआ...अरे! ये तो लॉबी स्थित डायनिंग-टेबल के इर्द-गिर्द रखी सभी छः कुर्सियाँ, जो गलबहियाँ किये, एक-दूसरे की टाँगों में टाँगे फँसाये लगी हुई हैं, आपस में बतिया रही हैं। उनकी फुसफुसाहट सुनकर एकबारगी तो विश्वास ही नहीं हुआ। फिर ध्यान दिया तो आशंका यकीन में बदल गयी। सचमुच ऐसा ही था। ये इन कुर्सियों की ही फुसफुसाहट थी। पता नहीं ये कब से, किससे, ऐसे बतिया रही हैं? उनकी बात-बतकहियाँ सुनने से खुद को रोक न सका। उत्सुकतावश सामने पड़े तख्त पर बैठ, चुपचाप उनकी बातें सुनने में मशगूल हो गया।

"हम सब छः हैं, जबकि इस फेमिली में सिर्फ चार मेम्बर ही हैं। आप दोनों के तो मजे हैं भइय्या। दीवाल से लगे हो। इस्तेमाल में भी कम आते हो। हम चार ही महीनों से रगेदे, पिसे जा रहे हैं। आड़े-तिरछे, गलत-सलत अड़साये ढ़ंग से ऐसे लगाये गये हैं कि हमारा सुभीता खड़े होना, साँस लेना तक मुश्किल है।" मेरे सामने की दोनों कुर्सियों में से एक ने, दीवाल से लगी दोनों कुर्सियों को लक्ष्य कर अपनी व्यथा कही।

"सही कह रहे हो भइया। आखिर हमारा क्या कसूर? मोल तो हम-सब को एक साथ ही लिया गया था, लेकिन महीनों से हमारी ही टाँगे घिसी जा रही हैं। यहाँ तक कि गाँव, शहर, अड़ोस-पड़ोस के अलग-अलग आदत-व्यवहार, वजन, शारीरिक-बनावट वाले मेहमानों आदि के आने पर बार-बार हमें ही घसीटे जाने से, ऊपर-नीचे की हमारी सभी चूलें भी हिल गयी हैं। मौके-बेमौके आये ऐसे मेहमानों की बात-बतकहियों, शोर-शराबे से हमें तनिक भी आराम नहीं मिल पाता। देखा जाय तो ऐसी आवाजाहियों से इस घर का ताना-बाना, निविड़ शान्ति भी जब-तब भंग होती रहती है।" दूसरी दायीं तरफ वाली कुर्सी ने मानो पहले की बातों से सहमति जताते हामी भरी।

"मालिक का वो लड़का तो हमारे ऊपर दोनों टाँगे उठाकर ही बैठता है। बेसऊर कहीं का? सारा कुशन गन्दा कर देता है। लम्पटई से तो जैसे बाज ही नहीं आता। कहता है....यहाँ डायनिंग-टेबल के नीचे टाँगों में मच्छर बहुत काटते हैं। अरे! मच्छरों से तो सारी दुनिया परेशान है। इसमें कौन सी नयी बात है? हर वक्त हम पर कूदते, धमा-चैकड़ी मचाये रहता है। हालाँकि, मालकिन और इस घर में प्रायः आने वाले मेहमानगण, बाजमौके उसकी शैतानियों पर उसे रोकते-टोकते भी हैं, पर मजाल क्या कि उसके कानों पर एक भी जूँ रेंग जाये? किसी के कुछ कहने सुनने का उस पर रंच-मात्र भी असर नहीं होता।" गोकि मेरे एकदम बायीं तरफ वाली कुर्सी ने रोष जताया हो।

"और इस घर के मालिक भी कुछ कम नहीं हैं। उन्हीं पर गया है वो लड़का। मालिक तो हम पर फैलकर ऐसे ओठंगते-बैठते हैं, जैसे कि हों लाट-साहब या किसी रियासत के राजा-महाराजा?" मेरे एकदम दाहिनी ओर रखी कुर्सी ने भी अपना दुखड़ा रोया।

"वो लड़की भी कम नहीं है। बाप रे बाप! पूरी दादी-नानी है। हर वक्त हड़बड़ी में रहती है। दौड़ते-भागते, बकैती करते ऐसे चलती है कि अदबदा कर हमारे पाँवों से जब-तब उसे ठोकर लगनी-ही-लगनी है। फिर तो मत

पूछिये, पूरे घर की शामत आनी-ही-आनी है। उस चश्मिश, नकचढ़ी, फुलटुश बवाली के बहत्तरों नखरे अलग से हैं। क्या मजाल जो बिना चूँ-चपड़ के बैठे जाय हम पर? मैडम के तो जैसे पैर ही नहीं एडजस्ट होते कहीं। कहती है...इन कुर्सियों की टाँगों के बीच पैर हिलाने-डुलाने भर की भी जगह नहीं है।'' समय की माँग को देखते हुए, दीवाल से लगी कुर्सियों में से भी एक ने बातचीत में शामिल होने की कोशिश की।

"अच्छा! ये बोल्लीं? मिस चमकीली जी। जरा दीवाल से लगी इन दोनों कुर्सी महारानी लोगों को तो देखो, कैसे मुस्की मार रही हैं? भइया, इन्हीं के ठाट हैं। इनका तो नम्बर ही नहीं आने पाता। मालकिन भी बस्स इन्हें ही कभी-कभार पोंछती-पाँछती अपने कर्तव्यों की इतिश्री कर लेती हैं। हमें तो कहती हैं कि ये तो रोज ही इस्तेमाल में आती रहती हैं, इन पर कहाँ धूल जमनीं? इन्हें क्या पोंछना? गज्जब है! मालकिन का भी खेला भाई। ऊपर से अपने मिलने-जुलने वालों से जब-तब डींगे मारते, तारीफों के पुल बाँधते, शेखी बघारते कहती भी रहेंगी...'हमारे घर ये डाइनिंग-टेबल देर से जरूर आया है, पर अपने जमाने का अव्वल है। अपना और बच्चों का पेट काट-काट कर एक-एक पैसे जोड़-जाड़ कर, बड़ी मुश्किलों से गाढ़ी कमाई की बचतों से हमने ये डायनिंग-टेबल खरीदा है।' बातें तो ऐसे बढ़-चढ़ कर करेंगी मानों दूसरों के यहाँ इनके टक्कर का दूसरा डायनिंग-टेबल ही नहीं होगा? इनके यहाँ डायनिंग-टेबल क्या आ गया है, जैसे कि मिल गया हो इन्हें कारूँ का खजाना?" मेरे सामने वाली कुर्सियों में से एक ने, दीवाल से लगी उन दोनों कुर्सियों को मिस चमकीली सम्बोधित करते तल्ख स्वर में कहा।

"सही कह रहे हो भइया। अरे! रोज-रोज न सही, हफ्ते-पन्द्रहियन, आपद्धर्म समझते, हमें पोंछ-पाँछ दें। हमें रोटेट करती रहें, या हमारी जगहें अदल-बदल दें। कम-अज-कम इसी बहाने हमें भी चित-फरियाने, हवा-पानी बदलने, साँस लेने का मौका मिल जाता? यहाँ तो पन्द्रहियन क्या महीनन बीत जाते हैं, हमारी सुध लिये। जैसे इस घर में हमारी परवाह ही नहीं किसी को? होते रहे हम मैले-कुचैले, गन्दे-सन्दे अपनी बला से? अरे! हम कहाँ कह रहे हैं कि हमें सजावट के लिए लाये हैं? बैठने-बिठाने के लिए ही लाये हैं। पर इसका मतलब ये भी नहीं कि हमें किसी भी तरफ लगा दें, एडजॅस्ट कर दें? छोटे से इस घर में रखने वास्ते जगह नहीं है, तो हमें लाये ही क्यों? कभी-कभी तो इस घर में मेहमान ज्यादा आ जाते हैं तो, ये लोग हमें किचन, बेडरूम या हद तब होती है जब लॉन तक में घसीटते लिये चले जाते हैं। उस दिन तो हद हो गयी, जब इनके एन. आर. आई. रिश्तेदार आये थे। हममें से एक को उन्होंने अपने सिरहाने लगा लिया, तो उनकी पत्नी ने हममें से एक को अपने गोनतारी लगा दिया। पूरी रात करते रहे बात-बतकही, 'झाड़े रहो महंगुआ' की तर्ज पर, न जाने कहाँ-कहाँ की, किन-किन रिश्तेदारों के बारे में? वैसे भी निंन्दा-रस में किसे मजा नहीं आता?" मौके की नजाकत को समझते, इस कुर्सी ने अपनी जान, माहौल को तनिक हल्का-फुल्का बनाने का प्रयास किया था।

"हमारी चिर्र-पिर्र, घिर्र-किर्र जैसी मार्मिक, कर्णभेदी आवाज सुनकर भी इस घर के किसी सदस्य को हम पर तरस नहीं आता। जबकि इस घर का हर सदस्य, हम पर टाँग पसारते, गोड़ फैलाते, बैठने का लुत्फ उठाता रहता है। हम अपने साथ ये अन्याय, ये सौतेलापन क्यों कर बर्दाश्त करें? आखिर, हमारे भविष्य से खिलवाड़ करने पर क्यों तुले हैं ये लोग? अरे! दुलारिये मत, लेकिन यूँ लतियाइये भी तो नहीं? घर में बाकी चीजें, कप-प्लेट, काँच, स्टील के बरतन, कपड़े, किताबें आदि तो ये लोग खूब सजा-घजा कर बन्द आलमारियों या रैक में रखते हैं, पर समझ नहीं आता कि हमें क्यों नहीं कायदे से सहेज कर रखते? हमारे प्रति इनकी लापरवाही, ये ढुलमुल रवैय्या अब तो नाकाबिले बर्दाश्त है।'' बगल वाली कुर्सी को जैसे कुछ याद आ गया हो। उसने यूँ आक्रोश जताया।

"मानता हूँ दोस्त, तुम्हारा स्वर तनिक तल्ख हो गया है। पर ये विद्रोही तेवर तुमने एक दिन में अख्तियार नहीं किया होगा। ये तुम्हारी और हमारी भी, वर्षों पुरानी व्यथा है। ये कोई साजिश नहीं, महज दोस्ताना गुजारिश है। शुरूआती दिनों में तुमने सुना होगा, बहुधा इनके घर आये लोग, हमें बीच लॉबी में रंग-बिरंगे कुशन-कवर से सजा-धजा देख, हमारे बारे में पूछते थे...'भाई साहब, इन कुर्सियों को कहाँ से लिया? कितने का पड़ा था? बहन

जी, इस कलर, और फैब्रिक में ये मॉडल तो इस शहर में अब कहीं नहीं दिखता। कहीं, आप लोगों की शादी में गिफ्ट तो नहीं मिला था?' तुमने गौर किया होगा, उनकी ऐसी दिल-फरेब बातें सुन, इन लोगों के चेहरे पर, मन्द-मन्द मुस्कियाने, गौरवान्वित होने का जो भाव आता था, वो तो आज भी वर्णनातीत है। अरे! पक्के शीशम की लकड़ी से बने हैं हम। ठीक से बचाकर रखेंगे हमें, तो हम इनका, इनके बच्चों और इनके बुढ़ापे तलक काम आयेंगे। पर कैसे कहें हम इनसे अपने दिल की ये बातें। हमें बेजुबान समझ, हमारी फिक्र तो जैसे कुछ समय से ये लोग ठण्डे बस्ते में डाले हुए हैं। ऐसा भी नहीं कि हमें औने-पौने दामों में खरीदा हो। इन्होंने हम पर बाकायदे अच्छा-खासा रकम खर्चा किया था। तुम्हें याद होगा, अक्सर ये लोग हम पर बैठते बतियाते थे कि हमें खरीदने से पहले इन्होंने हमारे बारे में दोस्तों-रिश्तेदारों और इण्टरनेट से भी विस्तृत जानकारी प्राप्त करते, दुकान-दुकान, चैमुहानी, तेलियरबाग, कटरा, नक्खास बाजार, मुंशीराम की पुलिया, बेनी गंज तक दौड़े-धूपे थे। रेट-मॉडल-फैब्रिक-कलर के बारे में विस्तृत जानकारी जुटायी थी। ब्राण्ड और क्वालिटी पर घण्टों डिस्कशन किया था। रिरियाते-घिघियाते मोल-भाव किया था, तब कहीं जाकर हमें फाइनली, अपने मन-पसन्द मॉडल के रूप में चूज किया था। अब देखो, हमारा क्या हाल बना रखा है? शुरूआती खुशनुमा दिनों के बारे में सोचता हूँ तो आँखों में आँसू आ जाते हैं। दिल भर उठता है। कलेजा मुँह को आ जाता है।'' कहते, मेरे सामने की वो कुर्सी इस कदर मायूस हो उठी, मानो अभी बुक्का फाड़कर रो देगी।

''सही कह रहे हो भइया! मुझे तो इनकी कही एक-एक बात याद आती है। मालकिन ने तो वर्षों से इंटीरियर-डिजायनिंग की ढ़ेरों पत्र-पत्रिकाओं से, डायनिंग-चेयर्स के सैकड़ों माडल्स की कटिंग्स, एक किताब के रूप में इस उम्मीद में सहेज रखा था कि जब कभी भी वे डायनिंग-चेयर्स खरीदेंगी, उन कटिंग्स से उन्हें मॉडल, कलर, फैब्रिक आदि च्वायस करने में मदद मिलेगी। मालकिन तो हमें खरीदने के लिए जिस भी दुकान पर जातीं, अपनी वो किताब भी साथ लिये जातीं, और कारपेन्टरों, दुकान-मालिकों से चहकते उस किताब से अपनी ढेरों पसन्दीदा मॉडल्स को छाँट-छाँटकर दिखाती जातीं। तब कहीं जाकर एक दुकान पर हम मिल गये, और इन लोगों की तलाश हम पर आकर रूकी...'अरे! यही तो है मेरी पसन्द वाला हू-ब-हू वही शाही अन्दाज वाला माडल।' मुझे याद है, ये कहते मालकिन चहक उठी थीं। दुकानदार ने भी पच्चीस साल की गारंटी लेते हुए कहा था...'अरे बहिन जी! पच्चीस साल के भीतर अगर कहीं भी टूट-फूट हो जाते, सड़-गल जाये या दीमक, कीड़े आदि लग जायें तो इसी दुकान पर फेंक जाइयेगा। मेरे सिर पर दे मारियेगा। पूरा पैसा वापस ले जाइयेगा। जुबान देता हूँ। गारण्टी लेता हूँ।'' मेरे एकदम दाहिने वाली कुर्सी ने भी अति-उत्साहपूर्वक अपना ये सुनहरा अतीत कह सुनाया।

''उस दिन तो इनके पास पूरे पैसे भी नहीं थे। इन लोगों ने किस्तों पर खरीदने का मन बनाया तो दुकानदार ही कहने लगा...'सर जी, माल अच्छा हो तो भला कहीं कीमत देखी जाती है? आप इन्हें फौरन, अभी-के-अभी ले लीजिए। हमारे यहाँ उधार बिकता नहीं, क्योंकि हमारी दुकान पर माल रूकता नहीं। फिर दुबारा ये माडल आये-न-आये, क्या भरोसा? पिछले हफ्ते इन्हें और भी दो परिवारों के लोग, जो तीन टैक्सियों में भरकर आये थे, देख गये हैं। लेकिन घण्टों मोल-तोल के वाबजूद भी बात नहीं बनी। क्या करें बाउजी यही हमारी रोजी-रोटी है। दो पैसे हमारी भी कमाई नहीं होगी, तो भला इतनी बड़ी दुकान, शो-रूम बनाने से फायदा भी क्या?' दुकान वाले की बातें सुन इन्होंने ही कहा था कि 'ठीक है, अभी आपको हम कुछ एडवान्स-पेमेण्ट कर दे रहे हैं। बाकी पैसे घर पर ठेलिया वाले के हाथ भिजवा देंगे।' इनकी बातों पर विश्वास करते हुए ही उस दुकान वाले ने हमें ठेलिया पर लदवाकर यहाँ पहूँचवाया था। अब क्या-क्या रोना रोयें, हमें तो पसन्द किये जाने से खरीदे जाने तक के सभी एपीसोड्स मुँह-जबानी याद हैं। ऐसा लगता है की शुरूआती दिनों में हमें खरीदने का जो उत्साह इन लोगों के दिलोदिमाग में था, वो जीवन की आपाधापी, भागम-भाग में समय के साथ शनैः शनैः निस्तेज सा हो गया। तभी तो इन लोगों ने हमें इस कदर उपेक्षित रख छोड़ा है। पर देखा जाय तो इसमें मालकिन का भी शत-प्रतिशत दोष

नहीं है, वो अकेली जान क्या-क्या करें? मालिक को भी तो कुछ हाथ-पैर डुलाने चाहिए कि नहीं? उनको तो लगता है जैसे घर के काम-काज से कुछ लेना-देना ही नहीं है।'' इस बार दीवाल से लगी कुर्सी ने मानो पत्नी का पक्ष लेते बीच-बचाव किया।

''सही कह रहे हो भइय्या। मालिक थोड़े धुन्नी किस्म के हैं। स्वभाव से थोड़ा बोहेमियन किस्म के हैं। सुनते हैं, कागद कारे करने का कुटेव भी है। और-तो-और, वो ही देर-रात्रि तक हम पर बैठे कुछ-न-कुछ लिखते-पढ़ते, बीच-बीच में रह-रह कर इस कदर पर्र-पर्र अपान-वायु छोड़ते रहते हैं कि बाजदफे, लॉबी को गमकाने वास्ते मालकिन को रूम-फ्रेशनर तक छिड़कना पड़ जाता है। दुनियावी मसलों पर दिमाग के घोड़े तो कमोड पर बैठे-बैठे दौड़ाते रहते ही हैं, पर जब उन्हें कार्यरूप में परिणत करना होगा, तो हम पर बैठ जाते हैं। ऐसे में वायु-प्रदूषण होना तो लाजिमी ही है। ये हाल तब है, जबकि वो रेगुलर इसबगोल की भूसी, च्यवनप्राश और जाने कौन-कौन सी दवाइयों की गोलियाँ भी जब-तब दूध या गुनगुने पानी के साथ गटकते रहते हैं। भई, कभी-कभी तो हद्द ही कर देते हैं। कहते हैं...'इससे मेरे आसपास 'डिस्टर्बिंग-एलीमेन्ट्स' फटकते नहीं। आखिर लिखने-पढ़ने के लिए कन्सन्ट्रेशन जो जरूरी है।' अभी कहीं गाँव-देहात में रहते तो, ढ़ीले-ढ़ाले ओरदावन वाली बंसखटिया पर बैठे, ओठंगे रहते। सारी लाटसाहबी निकल जाती। बगल वाली कुर्सी ने बिना ये जाने कि मैं भी उनकी ये बातें सुन रहा हूँ, मुझ पर तंज कसते, बात आगे बढ़ाई।

''मैंने भी गौर किया है। मालिक, अजीब फेंकू टाइप के आदमी लगते हैं। जरा देखो तो, खुद सोलर-हैट और मालकिन को स्ट्रा-हैट पहनाए, गेटवे-ऑफ-इण्डिया के सामने एक ठो फोटू खिंचवाकर, लॉबी में मुख्यद्वार के सामने की दीवाल पर ऐसे टँगवाया है कि इनके यहाँ आने, डायनिंग-चेयर्स पर बैठने वाले की निगाह उस फोटू पर अदबदा कर चली जाये, और वो उत्सुकतावश ही सही, एक बार तो पूछ ही बैठेगा...'गुरू जी, आपने ये फोटू कब और कितनी उम्र में खिंचाई थी? आप दोनों, बड़े ही क्यूट दिख रहे हैं?' हम पर बैठे, किसी से बतियाते हुए...'दैट वाज टाइम...दैट वाज टाइम' ये तकियाकलाम तो ऐसे दुहराते हैं मानो कोई खानदानी रईस हों, और अपनी सदियों पुरानी रियासत के दिनों को याद कर रहे हों। ऐसी बात-बतकहियों के दौरान, चाय तो इनके लिए बेहद जरूरी खुराक है। हर आधे घण्टे में चाय चाहिए, वो भी अदरक-तुलसी-कालीमिर्च वाली एकदम कड़क। यद्यपि, राहत देने वाली बात ये है कि अपनी इस आदत के कारण वे घर के किसी भी सदस्य को असमय ही कष्ट नहीं देते। चाय खुद्दै बना लेते हैं। 'एक चाय और हो जाये'...'और पार्टनर...और पार्टनर' कहते इस कदर बहस-चर्चा में मशगूल हो जाते हैं कि उनकी बातें तो जैसे खत्म ही नहीं होतीं। यारबाशी में इस कदर यकीन रखते हैं कि टहोका ले-लेकर बतियाते हैं। उनकी बहसबाजियों पर कभी-कभी उनकी अम्मा ही, जो यदा-कदा यहाँ आती रहती हैं, अपनी देशज-भाषा में उनकी बढ़िया खबर लेती हैं, ये कहते...'अरे! उठो लल्ला, देखो तुम्हारे पूजा-पाठ करने का टाइम हो गया है।' और यहाँ बैठे दूसरे लोगों को भी लताड़ देती हैं...'लल्ला की बातों पर मत जाइये। आप लोग अपने-अपने घर जाइये। अरे! ई तो बहसी है बहसी। कहल नूँबा...'बहसी के दस गो हल चले, बीस गो हेंगा।' पर मालिक भी कम नहीं हैं। बेवजह की बातों में भी गेय और रूमानियत के तत्व, सहज ही खोज निकालते हैं। कपोल-कल्पित ठकुरसुहातियाँ बतियाते, घुमा-फिरा कर लोगों को अपनी बातों के अखाड़े में ले ही आते हैं।'' इस कुर्सी ने मालिक, यानि मेरी तारीफ की थी या भर्त्सना? तत्काल कुछ समझ में नहीं आया।

''वैसे मालिक की बातें प्रासंगिक न सही, कहन-सुनन में दिलचस्प तो होती ही हैं। अपने आसपास की चीजों को सरसरी तौर पर देखने, यानि विहंगावलोकन के तो कत्तई पक्ष में नहीं रहते। उन्हें गौर से देखते, गहन पड़ताल करते चलते हैं। बोले तो, सिंहावलोकन के पक्षधर हैं। उनकी बातों से कभी-कभी तो सत्संग का सा आभास मिलता है। जमीन से जुड़ी बातें करते हैं। पर...लगता है जैसे उनकी कोई अलग ही दुनिया है, जिसमें वो कभी भी आ-जा सकते हैं। बतियाने की रौ में कभी-कभी नौस्टैल्जिक भी हो उठते हैं। बात की तह में जाकर एक-एक पार्टिकल,

बोले तो 'हाई-डिफिनीशन रीजलूशन' खोज लाने के आदी हैं। ऑउटडेटेड मसलों में भी ऑउटस्टैण्डिंग चीजें खोज निकालते हैं। यद्यपि व्यावहारिक हैं, पर सोचने के स्तर पर कहीं-न-कहीं आदर्शवादी भी हैं। 'एटीट्यूड बदलिये।'...ऑउट ऑफ दि बाक्स सोचिये।'...'सॉरी' और 'थैंक्स' की जादुई भाषा का इस्तेमाल कीजिए।'...'डायरी लिखिये।'...'अपने भीतर के बच्चे को मरने मत दीजिये।'...कहते हुए कभी-कभी तो मिलने-जुलने वालों के लिए एक मेण्टर की भूमिका में भी आ जाते हैं। कहते हैं कि 'लिखना कोई शुगल ही नहीं, तनाव-शैथिल्य का बायस भी है।' सार-संक्षेप ये कि हमारे मालिक पल्लवग्राही नहीं, बल्कि दुनियावी मसलों पर सर्वसमावेशी नजरिया रखते हैं।'' इस बार सामने की दाहिने कोने वाली कुर्सी ने ज्ञान बघारते मानो मेरी तारीफों के पुल बाँधने की कोशिश की थी। कारण...? क्या पता, उसे मेरी उपस्थिति का आभास हो?

''पर देखा जाय तो...लिखते समय उन पर परकाया-प्रवेश का असर यह रहता है कि तमाम आह और वाह की मिथक से परे, नफा-नुकसान की परवाह किये बिना, जस्स की तस्स ही लिखने के हिमायती हैं। ग्राम्शी, लोर्का, ब्रेख्त, लुकाच काफ्का आदि पर इस कान्फिडेण्ट से बतियायेंगे, गोकि ये इनके पड़ोसी हों, उनसे इनका रोज का मिलना-जुलना हो, उन पर पी. एच. डी. कर रखी हो। मातृभाषा के अलावा दूसरी भाषाओं की रचनाएँ भी दिलचस्पी से पढ़ते हैं। यद्यपि लेखन, बातचीत में बलाघात मानवीय सम्वेदनाओं, सामाजिक सरोकारों पर ही ज्यादा रहता है। दुनिया बदलने के बजाय प्रथमतः खुद में ही बदलाव के पक्षधर हैं। पर बाजदफे खुद को किसी भी खाँचे में मिसफिट पाते कह उठते हैं...'रहने लायक नहीं रह गयी है, अब ये जगह...' एक बात और जो मैंने गौर की है...बातचीत में किसी का भी हस्तक्षेप बर्दाश्त नहीं करते, अन्यथा अतिहीममय माहौल के दुर्वासामय बनने में जरा भी देर नहीं लगती। परन्तु ऐसे समय में घर के लोग, इनके इस मूड और मिजाज को भली-भाँति जानते-समझते, इनका सामने होने से भरसक बचते ही हैं। इस घर में बस्स इनका लड़का ही है जो बाजमौके इनके आगे...'सब किस्मत का खेल है...का करियेगा?'...'अब ऊपर वाले की जैसी मर्जी'...फिकरनाट प्यारे'...'कोई खड़ा क्यों नहीं है यहाँ, पापा की बातें सुनने?' जैसे जुमले उछालते इनके उत्साह को ठण्डा किये रहता है। ऐसे में इनके चेहरे पर जो बहत्तर कोण बनते-उभरते हैं, वो तो देखने ही लायक होता है।'' अब इन कुर्सियों की बातचीत दिलचस्प होती जा रही थी। इनका उत्साह देखते ही बनता था। घर के प्रत्येक सदस्य की आदतों, बात-व्यवहार, यहाँ तक कि घर आने-जाने वालों की बात-बतकहियों और प्रत्येक घटनाओं पर इनकी पैनी, कोलम्बसी नजर की तो दाद देनी होगी।

''दुनियावी मसलों पर लिखते-पढ़ते लादिमागी की हद ये है कि खुशफहमी पाले बैठे हैं, देर-सवेर इनके कामों को 'रीकग्नीशन' मिलेगा ही। देर से ही सही, इनकी रचनाओं का नोटिस लिया जायेगा। इनकी रचनाएं एक दिन देश-विदेश की प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्र, पत्रिकाओं में अवश्य छपेंगी। इनके बारे में सुखियाँ, हाशिये के बजाय फ्रण्ट पेज पर होंगी। कभी क्लींशेज तोड़ने की बात करेंगे, तो कभी ढूह ढहाने के। इस उम्मीद में, उम्र के पाँचवें दशक में भी हाथ-पैर मारते, कोशिश जारी रखे हुए हैं कि पता नहीं कब कौन सा फार्मूला, फण्डा या फैक्टर काम कर जाये? तिस पर 'आइडेन्टिटी-क्राइसिस' का आलम ये है कि कभी क्लीन-शेव रहेंगे, तो कभी महीनों दाढ़ी-मूँछें बढ़ाए रहेंगे। अब तो लगता है जैसे, सुनने भी कम लगे हैं। तुम्हें याद होगा...उस दिन तो हद हो गयी, जब इनके उस लेखक दोस्त ने, जो यहीं बैठा था, अभिव्यक्ति के खतरे, मठों-गढ़ों-गुटों-खेमों को तोड़ने की बातें करते-करते, सामने रखे काजू की प्लेट पर ध्यान आकृष्ट किया, तो इन्होंने जाने क्या सुना, काजू-व्हिस्की का नाम लेते, धड़ाधड़ अदम गोंडवी साहब के चार-पाँच शेर सुना डाले। बेचारे ने सामने प्लेट में रखे एक भी काजू को हाथ नहीं लगाया।'' इस कुर्सी ने मानो कुछ याद करते, मकान मालिक, यानि मेरी तारीफ में कुछ कसीदे टाइप काढ़ें हों।

"वैसे तो इस घर में सभी परपंची हैं, सीधे-सादे मुद्दे की बात पर भी घुमाय-फिराय कर बतियाने के आदी हैं, तिस पर ये डायनिंग-टेबल तो जैसे...'एक तो तितलौकी दूजे नीम चढ़ी' की कहावत चरितार्थ करते, घर के सदस्यों का ही नहीं, अड़ोसी-पड़ोसी के परपन्च का भी परमानेण्ट ठीहा हो गया है। मालिक भी अपने दोस्तों संग साहित्यजगत में सशक्त हस्ताक्षरों की कमी, या दिनों-दिन पाठकों की कमी होते जाने का मसला हो, या साहित्यजगत की तीखी-चटपटी, लाग-लपेट बाते हों, सब कुछ इसी डायनिंग-टेबल पर ही निबटाते हैं। अभी पिछले सण्डे ही देखा होगा। इनके पड़ोसी सक्सेना जी अपने खाली प्लॉट में काम शुरू कराने आये थे। उन्हें भी जाने क्या सूझी, गिट्टी, मोरंग, सरिया, कारपेण्टर, प्लम्बर, इलेक्ट्रीशियन आदि के बारे में उन्होंने इनसे औपचारिक पूछताछ क्या कर लिया, ये उन्हें यहीं डायनिंग-टेबल तक खींच लाये। मालकिन से दो चाय बना लाने के लिए बोलते, पूरे शहर में कहाँ-कहाँ ठीक-ठाक बिल्डिंग-मैटीरियल्स, और ठेकेदारों में कौन ईमानदार या ठग हैं, के बारे में विस्तारपूर्वक बताते, चर्चा करते, कई उदाहरण देते, बीच-बीच में दिलचस्प सुझाव भी दे-दे रहे थे। वो तो मालकिन ने 'ऑफिस से फोन आ रहा है' कहते बेडरूम में बुलाकर इन्हें ठेकाने से समझाया, तब कहीं जाकर, इनसे सक्सेना जी का पिण्ड छूटा। एक बात और गौरतलब है...बातचीत में विस्मयादिबोधक शब्द-संकेतों का प्रयोग ऐसे करेंगे, मानो इस पावन धरा-धाम के प्राणी ही न हों? अप्रत्याशित चीजों का भान ही न हो? बातचीत की शुरूआत करेंगे...'बंधुवर' या 'पार्टनर' कहते, और खात्मा करेंगे...'सो तो हैं...सो तो हैं।' कहते।" इस बार मेरे बायीं तरफ की कुर्सी ने हस्तक्षेप किया था।

"आप लोगों ने गौर किया होगा, डायनिंग-टेबल पर अगर खाना लगने में जरा भी देर हो जाये, तो मालिक साहब पता नहीं किस सनक में इसी टेबल पर ही...'ताक धिना-धिन...नागड़-नागड़'...तबला बजाने लगते हैं। एक मिनट भी शान्ति से नहीं बैठ सकते। बिलावजह भी पत्नी की तारीफ में कसीदे-पर-कसीदे काढ़ते, खाते समय भी ढ़ेरों तरह से मुँह बिचकाते, खाँसते, खँखारते, चपर-चपर बतियाते ही रहेंगे, या चैकोर, गोल, अण्डाकार टाइप के डायनिंग-टेबल के फायदे-नुकसान बताने लग जायेंगे। जैसे, मुँह बन्द ही नहीं रख सकते कभी? अरे भाई! हमें कहाँ आपत्ति है कि आप हम पर न बैठे? लेकिन जब आपका सारा काम, लिखना, पढ़ना, मुहल्ले वालों की निन्दा, प्रशंसा, परपंच बतियाना, यहाँ तक कि कभी-कभार बच्चों के होमवर्क वास्ते, या मुहल्ले की महिलाओं के साथ आये उनके छोटे बच्चों के लूडो, शतरंज खेलने, सोने के भी काम हम आते हैं, तो कम-अज-कम हमें सँभाल कर इस्तेमाल करते, झाड़-पोंछकर, बीच-बीच में पॉलिश-वॉलिश कराकर भी तो रख सकते हैं?" इस बार दीवाल से सटी कुर्सी ने भी हाँ-में-हाँ मिलाते, आपत्ति दर्ज की।

"पता नहीं तुम्हें याद है कि नहीं, अभी कुछ रोज पहले ही तो किसी से बतियाते कह रहे थे...'सैर कर दुनिया की गाफिल जिन्दगानी फिर कहाँ...?' हमें किसी-न-किसी बहाने अलग-अलग शहरों, प्रदेशों, पर्यटन-स्थलों, तीर्थ-स्थलों आदि का सैर भी करते रहना चाहिए। हवा-पानी बदलने, नयी जगहों पर घूमने-फिरने, नये-नये लोगों से मिलने-जुलने, देशाटन आदि से जीवन में नई ऊर्जा का संचार होता है। जिजीविषा बनी रहती है।' पर अफसोस कि जब हमारी बारी आती है, तो ये लोग हमें सिम्पली...रोटेट भी नहीं कर सकते। क्या, हमारा मन नहीं करता, हवा-पानी बदलने का, अपनी जगहें बदलने का?" इन कुर्सियों के कातर स्वर, उनकी निरीहता सुनते मानो मेरी नींद उड़ गयी हो। ज्ञान-चक्षु खुल गये हों। छठी-इन्द्रिय जाग गयी हो। मेरी आँखें फटी की फटी रह गयीं। उनकी बातें इतनी इन्टेरेस्टिंग थी कि साँसे रोके, होशोहवास खोये उन्हें ऐसे सुनता रहा कि लगातार एक ही मुद्रा में बैठे-बैठे मेरे पैरों में झुनझुनी सी चढ़ गयी। उन्हें मंत्र-मुग्ध सुनते, नजदीक जाकर छूकर, उनके स्पर्श, आत्मीयता को महसूस करते, ऐसा लगा मानो इन्हें बहुत दिनों बाद गौर से निहार रहा हूँ। गोकि उन कुर्सियों पर प्यार उमड़ आया हो। पर अफसोस भी हुआ कि हमारा परिवार इनकी दिक्कतों से अब तक गाफिल क्यों रहा?

खैर...उस समय तो मुझे कुछ भी नहीं सूझा। एक तो मध्य रात्रि की बेला, दूजे उस सूई-पटक सन्नाटे में क्या हो सकता था? देर रात गये इन कुर्सियों की साफ-सफाई, जगह बदलने में खामखाह ही घर में और लोगों की भी नींद खराब होती। लेकिन ये तो तय ही कर लिया कि इन कुर्सियों के साथ अब और अन्याय नहीं होगा। आखिर, इन बेजुबानों की भी सुनवाई होनी चाहिए कि नही? हाल ही में पढ़ा 'सी. मार्गेनटर्न' ये कथन याद आया..."होम इज नौट व्हेयर यू लिव, बट व्हेयर दे अण्डरस्टैण्ड यू"...अब इनका इस्तेमाल रोटेशन-सिस्टम से होगा, ताकि कोई एक भी कुर्सी लम्बे समय तक अप्रयुक्त न रहे। सुबह होते ही, पत्नी को सबसे पहले इन कुर्सियों को महीने या पन्द्रह दिन में अदला-बदली करते, रोटेशन-सिस्टम से लगाने की हिदायत दूँगा। चूँकि उन कुर्सियों की बातें सुनते काफी देर हो गयी थी, मेरा गला भी सूख रहा था। सो डायनिंग-टेबल पर रखे जग से लगभग आधा जग पानी, गटागट पीया और वापस आकर अपने बिस्तर पर सो गया।

"आपकी तबियत तो ठीक है न?" सुबह उठकर चाय पीते-पीते, डायनिंग-चेयर्स की अदला-बदली करते मुझे देख, पत्नी ने प्रश्नाकुलता भरी निगाह से ये चिर-परिचित सा सवाल दागा।

"क्यों? क्या हुआ है मेरी तबियत को?" मैंने भी जानबूझकर अनजान बनने की कोशिश की।

"आज ये सुबह-सुबह आपको इन कुर्सियों की अदला-बदली की क्यों कर सूझी? आज दफ्तर नहीं जाना? छुट्टी है क्या?" पत्नी अभी भी मेरी ओर विस्मयभरी नजरों से देख रही थीं।

"तुम जैसा सोच रही हो, वैसा कुछ भी नहीं। दफ्तर तो जाना ही है। काम-काजी आदमी हूँ। बस्स...अन्तरात्मा की आवाज सुनी, और मन हुआ कि इन कुर्सियों की जगह आपस में बदल दी जाय। इनकी जगहें अदला-बदली करने में समय ही कितना लगता है? बल्कि मैं तो तुम्हें ये सुझाव दूँगा कि महीना-पन्द्रहियन इन्हें रोटेट भी करती रहा करो। ताकि सभी कुर्सियाँ बराबर इस्तेमाल में आती रहें।" मैंने विस्तारपूर्वक समझाना चाहा।

"कहीं रात में ये कुर्सियाँ आपके सपने में तो नहीं आयी थीं?"

"यही समझ लो।" हस्बेमामूल सा उत्तर दिया मैंने।

"बड़े आये काम-काजी? कार्यदिवस में तो ऑफिस में रहेंगे, और छुट्टियों में जब घर में रहेंगे तो, खब्तुल-हवास हुए लिखने-पढ़ने में जुटे रहेंगे। ऊपर से छुट्टियों में दुनियाभर के लोगों संग बैठकी, ये सेमिनार, वो गोष्ठी, ये विमोचन, वो लोकार्पण आदि में व्यस्त रहेंगे। आपको कुछ पता भी है? आप इन कुर्सियों पर किस तरह टेढ़े-मेढ़े अंदाज में बैठते हैं? दो कुर्सियों की तो चूलें भी हिलने लगी हैं। शायद आपको पता न हो, मैं खुद ही पन्द्रह-बीस दिनों में इन्हें पोंछते-झाड़ते, इनकी अदला-बदली करती रहती हूँ। हाँ, इधर दो-तीन महीने से, विभिन्न शहरों में आयोजित, आपके साहित्यिक समारोहों में उपस्थिति की वजह से हम लोगों के आउट-ऑफ-स्टेशन रहने से घर का सारा काम-काज अस्त-व्यस्त-सा हो गया है, तो इन पर ध्यान ही नहीं गया। लेकिन ठीक है, इस बार आपने ही इनके जगह बदल दिये। ये तो बड़ी अच्छी बात है।"

"चलो...कम-अज-कम तुम्हें मेरा कोई तो काम पसन्द आया?"

"हाँ, लेकिन अब इन पर भी कुछ ऊलजलूल लिखने मत बैठ जाइयेगा। अभी मेरे साथ बाजार चलिए। महीने भर से घर में कुछ भी सौदा-सुलुफ नहीं आया है।"

"जैसी हुजूर की मर्जी...हें-हें-हें।"

वैसे अपन भी आसानी से मान जाने वाले, पत्नी की चिकनी-चुपड़ी बातों में आ जाने वाले जीव नहीं हैं। इन कुर्सियों की आपसी बातचीत का विस्तृत ब्यौरा एक दिन आप सबसे अवश्य साझा करूँगा। देखियेगा...। पढ़ियेगा भी...।

# हे शिव!

## रमेश चन्द्र

बचपन में,
माँ जब चूल्हे में आग जलाती थीं,
हमें गोद में बिठा आग सिकाती थीं।
हम गोद से निकल आग गोदने लगते,
माँ कहतीं आग से खेलना अच्छा नहीं है!
तू अब बच्चा नहीं है।
बड़े होकर हम माँ की बात भूल
आग से खेलना सीख रहे हैं धर्मराज से,
मारकर भाई सगा,
पहचान बनाना सीख रहे हैं इसी काज से।
हत्याओं के किस्से हमारे दिल नहीं दहलाते हैं।
ऐसी खबरों को हम नाश्ते संग खा जाते हैं।
दस-बीस के नर-संहार की घटना
हमारे लिए घटना नहीं रही।
सम्वेदनाओं, वेदनाओं, माँ के आँसुओं
को भूल हम इस कदर मशगूल हुए मर्दानगी में
कि जननी को भूल गए, जन्म-भूमि को भूल गए
एक माँ का दूध पी, दूसरियों का खून पी गए।
आँसुओं के पीछे छिपी कराहटों को भूल,
दूसरे भाई का खून पीने पर तुल गए।
अपने ही वतन को
गोलियों से छलनी कर दिया है
और माँओं की कोखों को
अलग-अलग नाम दे दिया है।
अब काश! इस जमीन पर लहू की बरसात हो,
उसी से पैदा हों लोग,
ताकि समझ लें वे, कि उनका लहू एक है,
उनका ईश्वर एक है, माँओं का दुख एक है,
धर्म एक है, जाति एक है, समाज एक है,
मानव एक है और मानवीयता एक है।
अब तू ही हे शिव!
अपनी प्रलय-मिश्रित आशीर्वाद की मुद्रा से
कुछ पल के लिए आशीर्वाद को अलग कर, तांडव कर।
इस अभिशप्त मनुष्यता को पल भर के लिए नष्ट कर
और अपनी दिव्य शक्ति से

उसमें एक ही जाति, एक ही मजहब,
एक ही आत्मा और एक ही रूप भर,
क्योंकि मनुष्य के उद्धार का
इससे बेहतर उपाय
अब और नहीं लगता!

# "छायावादोत्तर हिंदी कविता : रचनात्मक प्रतिबद्धता और सार्थकता"
# किरोड़ीमल शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय

**डॉ. मीनकेतन प्रधान**

किरोड़ीमल शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय रायगढ़, छत्तीसगढ़ (भारत) के स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग द्वारा विगत २४ एवं २५ फ़रवरी को "छायावादोत्तर हिंदी कविता : रचनात्मक प्रतिबद्धता और सार्थकता" विषय पर दो दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार का आयोजन सम्पन्न किया गया । जिसमें देश-विदेश के प्रतिष्ठित विद्वानों सहित पूरे अंचल से साहित्यनुरागियों की उत्साहपूर्ण सहभागिता रही।

२४ फरवरी २०२३ को संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र में प्रतिष्ठित कवि पद्मश्री लीलाधर जगूड़ी, देहरादून (उत्तराखंड), पद्मश्री हलधर नाग, बरगड़ (ओडिशा), अमेरिका से प्रवासी साहित्यकार डॉ.अनिता कपूर, शहीद नंद कुमार पटेल विश्वविद्यालय, रायगढ़ के कुलपति डॉ.ललित प्रकाश पटेरिया, छत्तीसगढ़ राजभाषा आयोग के पूर्व अध्यक्ष डॉ. विनय कुमार पाठक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के सहायक निदेशक द्वय डॉ. दीपक पांडेय, डॉ. नूतन पांडेय, लिंगम चिरंजीव राव (आँध्र प्रदेश) की गरिमामयी उपस्थिति रही। डॉ. स्नेह ठाकुर कनाडा का ऑनलाइन व्याख्यान हुआ। इसी तरह चीन के शोधार्थी भी ऑनलाईन जुड़े । डॉ. मीनकेतन प्रधान के संयोजन और सौरभ सराफ के संचालन में उद्घाटन एवं अकादमिक सत्र की अध्यक्षता डॉ.विनय कुमार पाठक, पूर्व अध्यक्ष छत्तीसगढ़ राजभाषा आयोग रायपुर ने की। सत्र समीक्षक के रूप में डॉ. रामायण प्रसाद टंडन, अध्यक्ष अध्ययन मंडल हिन्दी बस्तर विश्वविद्यालय, डॉ.अंजलि शर्मा, प्रो. शिव कुमार शर्मा की सक्रिय सहभागिता रही। आरम्भ में कलाविद वेदमणि सिंह ठाकुर, जगदीश मेहर, मनहरण सिंह ठाकुर, ईशा यादव एवं अंगद द्वारा सरस्वती वंदना सहित नागार्जुन, शमशेर बहादुर सिंह, मुकुटधर पाण्डेय इत्यादि कवियों की रचनाओं का सस्वर संगीतमय गान किया गया । कुलपति डॉ. ललित प्रकाश पटोरियाा ने अपने उद्बोधन में इस आयोजन को साहित्य के क्षेत्र में अत्यंत महत्त्वपूर्ण कहा। स्वागत वक्तव्य प्राचार्य डॉ. ए.के.तिवारी ने दिया।

इस अवसर पर डॉ. मीनकेतन प्रधान और सौरभ सराफ द्वारा सम्पादित वृहत् ग्रंथ "छायावाद के सौ वर्ष और मुकुटधर पांडेय" का विमोचन हुआ। सुरेंद्र कुमार मलिक, प्रकाशक नेशनल पब्लिशिंग कम्पनी नयी दिल्ली के प्रतिनिधि पंकज झा ने विमोचन में विद्वानों को ग्रंथ की प्रति भेंट कर प्रकाशन उपक्रम को रेखांकित किया। इस क्रम में डॉ. दीपक पांडेय द्वारा लिखित पुस्तक 'नार्वे के प्रवासी हिन्दी साहित्यकार सुरेश चंद्र शुक्ल की रचनाधर्मिता' के साथ ही महाविद्यालय की मनोविज्ञान विभागाध्यक्ष डॉ. शारदा घोघरे की साइकोलॉजी से सम्बंधित पुस्तक का भी विमोचन किया गया। साहित्यकार सम्मान में हिन्दी सहित अन्य भाषा के प्रतिष्ठित रचनाकारों का सम्मान तथा नयी प्रतिभाओं को पुरस्कृत करना भारत के पूर्वांचल का सार्थक उपक्रम सिद्ध हुआ । सत्रारम्भ में संयोजक मीनकेतन प्रधान ने संगोष्ठी के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए संक्षेप में विषय प्रवर्तन किया। आयोजन व्यवस्था में सौरभ सराफ, डॉ. रवीन्द्र चौबे, लक्षेश्वरी कुर्रे, उत्तरा कुमार सिदार की अहम भूमिका रही ।

पद्म श्री लीलाधर जगूड़ी ने इस अवसर पर संगोष्ठी के मूल विषय “छायावादोत्तर हिंदी कविता में रचनात्मक प्रतिबद्धता और सार्थकता” पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि इस आयोजन से हिंदी भाषा का गौरव बढ़ेगा। उन्होंने अपने व्याख्यान के ही कुछ महत्त्वपूर्ण कविताओं का पाठ कर विद्यार्थियों एवं नयी पीढ़ी के

रचनाकारों की व्यापक संलग्नता को रेखांकित किया । आयोजन में उपस्थित पद्मश्री हलधर नाग ने समकालीन कविता पर बात करते हुए उड़िया भाषा और संस्कृति पर भी प्रकाश डाला तथा उड़िया की कविताओं का पाठ किया। अमेरिका की प्रवासी साहित्यकार डॉ. अनिता कपूर ने छायावादोत्तर काव्यांदोलनों के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला एवं विभिन्न साहित्यकारों की रचनाओं का सार्थक विश्लेषण किया। डॉ. दीपक पांडे ने प्रगतिवादी काव्य पर प्रकाश डालते हुए नागार्जुन, शमशेर, त्रिलोचन और केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं की महत्ता पर प्रकाश डाला। उन्होंने प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, समकालीन कविता और परवर्ती कविता के विकास क्रम सहित हिन्दी साहित्य की भावी सम्भावनाओं को रेखांकित किया। डॉ.रामायण प्रसाद टंडन ने सारगर्भित सत्र की समीक्षा की। अध्यक्षीय आसंदी से डॉ. विनय कुमार पाठक ने आयोजन को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महत्त्वपूर्ण माना। उन्होंने छायावादोत्तर कविता के विविध सोपानों का उल्लेख करते हुए युगीन संदर्भों में कविता की युगान्तरकारी भूमिका पर प्रकाश डाला। डॉ. पाठक ने अपने उद्बोधन में सद्य: प्रकाशित पुस्तक "छायावाद के सौ वर्ष और मुकुटधर पांडेय" को पाठक, विद्यार्थी वर्ग के लिए उपयोगी बताया।

आयोजन के द्वितीय दिवस पर उपस्थित डॉ. करुणा पांडे ने संगोष्ठी के विषय - शीर्षक "छायावादोत्तर हिंदी कविता रचनात्मक प्रतिबद्धता और सार्थकता" को आज से संदर्भ में प्रासंगिक ठहराते हुए प्रयोगवाद एवं नई कविता के विकास को युगानुरूप काव्यांदोलन के रूप में विश्लेषित किया। उन्होंने अज्ञेय, मुक्तिबोध आदि कवियों की कविताओं को उद्धृत किया। डॉ. नूतन पांडे ने इस अवसर पर प्रवासी साहित्यकारों द्वारा लिखे जा रहे साहित्य की चर्चा की। उन्होंने अपने वक्तव्य में अभिमन्यु अनंत एवं अन्य प्रवासी साहित्यकारों की रचनात्मक विशिष्टता का प्रतिपादन किया। इस दिवस में भी जनवादी कवि पद्मश्री लीलाघर जगूड़ी ने अपनी बहुचर्चित कविताओं के पाठ से श्रोताओं को मूल्यचेतना की दिशा में प्रेरित किया। तदंतर डॉ. राम नारायण पटेल ने अपने व्याख्यान में समकालीन हिंदी कविता पर विस्तार से अपनी बात रखी । आधुनिक हिंदी कविता किस रूप में समकालीन हिंदी कविता तक प्रसरित हुई यह उन्होंने अपने उद्बोधन में बताया । उनके कुछ शोधार्थी ने प्रपत्र वाचन के लिए ऑनलाइन माध्यम से चीन से जुड़ कर प्रपत्र प्रस्तुत किया। श्री लिंगम चिरंजीव राव ने इस अवसर पर नवगीत काव्य आंदोलन पर प्रकाश डाला। डॉ. रामायण प्रसाद टण्डन ने व्याख्यान सहित सत्र समीक्षा की। वरिष्ठ आईआरएस अधिकारी अनिल पाण्डेय ने भी सत्र समीक्षा करते हुए पाठकीय दृष्टिकोण से आयोजन को सार्थक बताया।

प्रपत्र वाचन सत्र का क्रियान्वयन प्रो.शिव कुमार शर्मा, डॉ. श्रीमती रवीन्द्र चौबे, उत्तरा कुमार सिदार, लक्षेश्वरी कुर्रे, शिवानी शर्मा ने किया तथा संचालन डॉ. रमेश कुमार टंडन ने किया। प्रो. के. के. तिवारी, जया षड़ंगी, डॉ. अभिनेष सुराना, डॉ. अर्चना झा, डॉ. आदिले, डॉ. हेमचंद्र पांडेय, डॉ. सुचित्रा त्रिपाठी, डॉ.अंजलि शर्मा, डॉ. रोशनी मिश्रा, डॉ. विद्या प्रधान, राम भजन पटेल, बनवारी लाल देवांगन, प्रो.आर.के.तम्बोली, डॉ. फूल दास महंत, प्रो.आर.के .पटेल., वाई.के.पंडा, डॉ. अर्चना पाण्डेय, डॉ. बेठियार सिंह साहू, डी.एस.चंद्रा, वीरसेन सिंह, राहुल सराफ, लोचन प्रसाद गुप्ता, राजीव गुप्ता, छविलाल सिदार, राम कुमार पटेल, निमाई प्रधान आदि द्वारा आयोजन सम्बन्धी प्रतिक्रिया भी व्यक्त की गई। प्राचार्य डॉ. ए.के. तिवारी, डॉ.पी .बी. बैस ने धन्यवाद ज्ञापित कर इस गरिमामय आयोजन को महाविद्यालय की उपलब्धि बताया। आयोजन में विदेश के अनेक प्रतिभागियों सहित देश के विभिन्न राज्यों से लगभग दो हज़ार प्रतिभागी ऑनलाइन माध्यम से जुड़े रहे। भौतिक रूप से शताधिक विद्वतजन उपस्थित हुए । महाविद्यालय के प्राध्यापकों, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग के अध्येताओं, आयोजक मण्डल-सदस्यों एवं स्नातक - स्नातकोत्तर के विद्यार्थियों की सक्रिय उपस्थिति रही। समूचे आयोजन के क्रियान्वयन में सौरभ सराफ, शिवानी शर्मा, डॉ.विद्या प्रधान एवं स्नातकोत्तर हिन्दी साहित्य परिषद के अध्येताओं की अग्रणी भूमिका रही। संयोजक मीनकेतन प्रधान ने उच्चशिक्षा विभाग रायपुर एवं अन्य सहयोगी संस्थानों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित किया है। - डॉ.मीनकेतन प्रधान (संगोष्ठी संयोजक) प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष - हिन्दी

# डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार

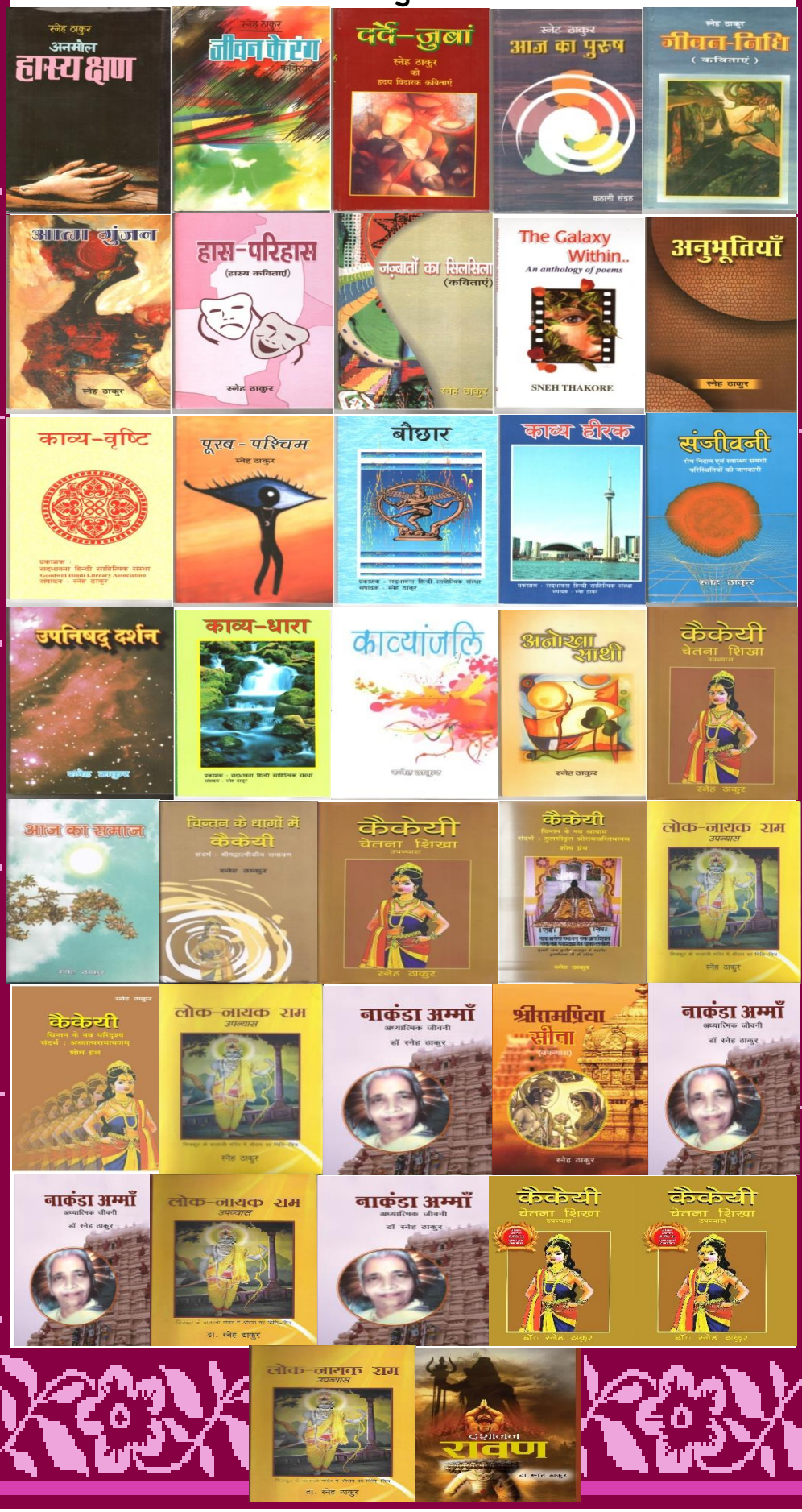

# डॉ. स्नेह ठाकुर की प्रकाशित पुस्तकें

दशानन रावण ( उपन्यास )
लोक-नायक राम ( उपन्यास, चतुर्थ संस्करण )
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र.
अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, चतुर्थ संस्करण)
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र.
अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, तृतीय संस्करण)
नाकंडा अम्माँ ( अध्यात्मिक जीवनी, चतुर्थ संस्करण )
लोक-नायक राम ( उपन्यास, तृतीय संस्करण )
नाकंडा अम्माँ ( अध्यात्मिक जीवनी, तृतीय संस्करण )
नाकंडा अम्माँ ( अध्यात्मिक जीवनी, द्वितीय संस्करण )
श्रीरामप्रिया सीता ( उपन्यास )
नाकंडा अम्माँ ( अध्यात्मिक जीवनी )
लोक-नायक राम ( उपन्यास, द्वितीय संस्करण )
कैकेयी : चिन्तन के नव परिदृश्य - संदर्भ : अध्यात्मरामायण ( शोध-ग्रन्थ )
लोक-नायक राम ( उपन्यास )
कैकेयी : चिन्तन के नव आयाम - संदर्भ : तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस ( शोध-ग्रन्थ )
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र.
अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, द्वितीय संस्करण)
चिन्तन के धागों में कैकेयी - संदर्भ : श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण (शोध-ग्रन्थ)
आज का समाज ( सामाजिक लेख-संग्रह )
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, राष्ट्रपति भवन पुस्तकालय में संग्रहित)
अनोखा साथी ( कहानी-संग्रह )
काव्यांजलि ( काव्य-संग्रह )
काव्य-धारा ( संकलन, संपादन एवं प्रकाशन )
उपनिषद दर्शन ( दार्शनिक एवं अध्यात्मिक )
संजीवनी ( स्वास्थ्य सम्बन्धी आलेख )
काव्य हीरक ( संकलन, संपादन एवं प्रकाशन )
बौछार ( संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
पूरब-पश्चिम ( आप्रवासी सम्बन्धित आलेख संग्रह )
काव्य-वृष्टि ( संकलन, संपादन एवं प्रकाशन )
अनुभूतियाँ ( काव्य-संग्रह )
The Galaxy Within (A collection of English poems)
ज़ज़्बातों का सिलसिला ( काव्य-संग्रह )
हास-परिहास ( हास्य कविताएँ )
आत्म-गुंजन ( अध्यात्मिक-दार्शनिक गीत )
जीवन-निधि ( काव्य-संग्रह )
आज का पुरुष ( कहानी-संग्रह )
दर्दे-ज़ुबाँ ( नज़्म व ग़ज़ल संग्रह )
जीवन के रंग ( काव्य-संगह )
अनमोल हास्य क्षण ( नाटक-संग्रह, फेडरल गवर्नमेन्ट, कैनेडा द्वारा अधिकतम अनुदान से सम्मानित)

**प्रकाशक व वितरक**

स्टार पब्लिकेशंज़ (प्रा.) लि., ४/५ बी., आसफ अली रोड, नई दिल्ली - ११०००२, भारत
Star Publishers' Distributors, 55, Warren Street, LONDON – W1T 5NW, England
दिल्ली प्रेस की सरिता व अन्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में भी रचनाएँ प्रकाशित